43

4, II

श्रीः

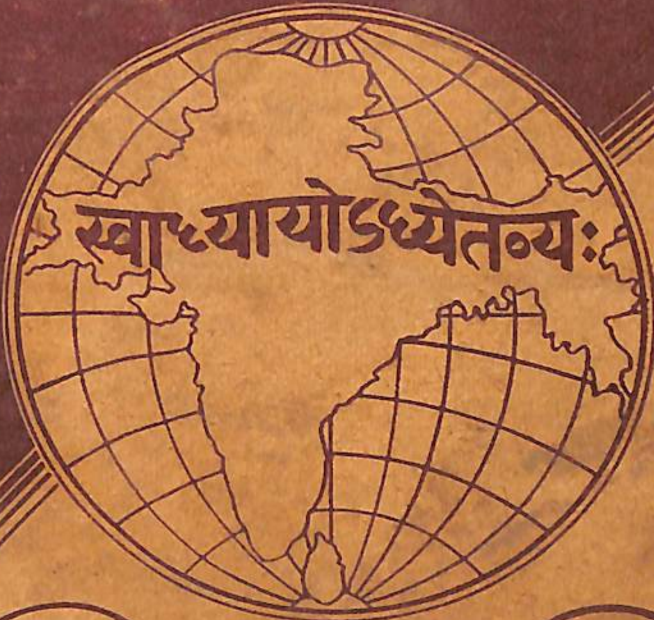
त्रैमासिक

श्रीस्वाध्याय

[हेमन्ताङ्क]

वर्ष ४
सं० २००१

संख्या २
पौष



वार्षिक मूल्य ३।-)

इस अङ्क का मूल्य ॥-)

संस्थापक—
श्रीमान् अमृतवाग्भव आचार्य

सम्पादक—
श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी

विषय-सूची

आगामी 'वसन्ताङ्क'

"श्रीस्वाध्याय" का 'वसन्ताङ्क' प्रतिवर्ष निश्चित समय पर चैत्र-शुक्ला-दशमीको प्रकाशित होता है। परन्तु इस वर्ष चैत्र अधिक मास है, अतः आगामी 'वसन्ताङ्क' प्रथम चैत्र शु० १० को प्रकाशित न होकर द्वितीय चैत्र शु० १० को प्रकाशित होगा। इसका कारण यह है कि भारतसरकारकी ओरसे स्वीकृत पत्रोंको न्यूजप्रिण्ट कागजका कोटा तीन-तीन मासका अंग्रेजी तारीखके अनुसार मिलता है। यह 'हेमन्ताङ्क' हमने जनवरीसे मार्च तकके कागज व्यय करनेके सरकारी परमिटसे छापा है। अब दूसरा नया परमिट हमें अप्रैल में मिलेगा, अतः प्रथम चैत्र शु० १० को मार्चमें हम 'वसन्ताङ्क' किसी स्थितिमें भी प्रकाशित नहीं कर सकते। द्वि० चैत्र शु० १० से दश दिन पूर्व ता० १३ अप्रैल तक 'वसन्ताङ्क' सब ग्राहकोंके पास पहुँचा दिया जायेगा। इससे पहले कोई सज्जन 'वसन्ताङ्क' के लिए पत्र लिखनेका कष्ट न करें। यह 'हेमन्ताङ्क' निश्चित तिथिसे कुछ पूर्व ही हम पाठकोंको भेंट कर रहे हैं।

—व्यवस्थापक 'श्रीस्वाध्याय'

॥ श्रीः ॥

श्रीस्वाध्याय

[त्रैमासिक-पत्र]

संस्थापक तथा प्रधानाध्यक्ष—

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम आचार्य

श्री १०८ मान् अमृतवाग्भवजी महाराज

संरक्षक—

बघाटमहीमहेन्द्र धर्ममार्तण्ड

राजा साहब श्री १०५ मान् दुर्गासिंह जी बहादुर C. I. E. सोलन।

रावराजा कैप्टेन श्री १०५ मान् गिरिधारीशरणसिंह जी भरतपुर।

सहायक—

श्री १०५ मती माँजी महाराणी साहिबा (सिरमौरीजी) बघाटराज्य।

श्री १०५ मती सौ० राणी साहिबा वृन्दावनवाली जी (भरतपुर)।

श्रीमान् सरदार कुँवर रणदीपसिंह जी नाहन (सिरमौर)।

श्रीमान् कुँवर शिवसिंह जी B. A., L-L. B. सेशनजज सोलन।

श्रीमान् कुँवर ईश्वरीसिंह जी उपप्रधान देवस्थान उदयपुर (मेवाड़)।

श्रीमान् सरदार जगजीतसिंह जी ढिल्लों B. A., L-L. B. नाभा।

सम्पादक और व्यवस्थापक—

ज्यो० मा० ज्यो० र० श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिश्शास्त्री

उपसम्पादक—

श्री पं० बलजिन्नाथ शास्त्री B. A.

प्रकाशक—

श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (पंजाब)

श्रीस्वाध्यायके नियम तथा उद्देश्य

उद्देश्य—

समस्त संसारको हितकी ओर ले जाना तथा ऐहलौकिक और पारलौकिक मोक्ष (स्वातन्त्र्य) प्राप्त कराना "श्रीस्वाध्याय" का मुख्य उद्देश्य है।

सञ्चालक गणोंके नियम—

संरक्षक—

(१) जो महानुभाव ३००) तीन सौ रुपयेसे अधिक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के संरक्षक माने जायेंगे।

सहायक—

(२) जो सज्जन ५०) से ३००) रु० तक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के सहायक माने जायेंगे।

सम्मान्य ग्राहक—

(३) जो सज्जन ५) से अधिक ५०) रु० तक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के सम्मान्य ग्राहक माने जायेंगे।

'श्रीस्वाध्याय' के नियम—

(१) 'श्रीस्वाध्याय' (जब तक त्रैमासिक रहेगा तब तक) आश्विन शुक्ल १०, पौष शुक्ल १०, चैत्र शुक्ल १० और आषाढ़ शुक्ल १० को प्रकाशित हुआ करेगा। इस त्रैमासिक संस्करण का वार्षिक मूल्य ३।~) और एक प्रतिका १) है। स्थायी ग्राहक आश्विन से ही बनाये जाते हैं। 'श्रीस्वाध्याय' के स्थायी ग्राहकों को हमारी "श्रीग्रन्थमाला" की सभी अद्भुत अमूल्य पुस्तकें बिना मूल्य (मुफ्त) दी जावेंगी। ऐसी सर्वोपयोगी अमूल्य पुस्तकें कोई भी मासिक-पत्र प्रतिवर्ष अपने ग्राहकोंको बिना मूल्य नहीं देता। यह 'श्रीस्वाध्याय' के ग्राहकों को विशेष लाभ है। पर्याप्त संरक्षक सहायक और ग्राहक होने पर बहुत शीघ्र ही 'श्रीस्वाध्याय' मासिक कर दिया जायगा।

(२) जिन सज्जनोंके लेख श्रीस्वाध्याय-सदनकी ओरसे प्रार्थना-पूर्वक मंगवाये जायेंगे वे अवश्य प्रकाशित होंगे। अन्य लेख यदि गवेषणापूर्ण मौलिक और उपयोगी समझे जायेंगे तो यथा समय प्रकाशित हो जावेंगे, अन्यथा नहीं।

(३) लेख, कविता, चित्र, समालोचनार्थ पुस्तकों की दो-दो प्रतियाँ और विनिमय (परिवर्तन) के पत्र पत्रिकायें सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (पंजाब) के पते से भेजने चाहियें।

(४) लेख, कविता आदि प्रकाशनार्थ सामग्री स्पष्ट अक्षरोंमें कागजके एक ओर ही लिखी होनी चाहिए।

(५) किसी लेखके प्रकाशित करने या न करने, उसे घटाने बढ़ाने तथा उसे लौटाने न लौटानेका सम्पूर्ण अधिकार सम्पादक को है। जिस अस्वीकृत लेखको सम्पादक लौटाना स्वीकार करें, उसका डाक और रजिस्ट्रीका व्यय लेखकको भेजना होगा। अधूरे लेख नहीं लिये जाते।

विज्ञापन छपवाईके नियम—

१ पृष्ठ या दो कालम की छपाई	२०)	प्रति अङ्क
आधा पृष्ठ या एक कालम की छपाई	१२)	,,
चौथाई पृष्ठ या आधा ,,	६।।)	,,

पूरे वर्ष या चार अंकोंमें एक पृष्ठकी छपाई ६५) रु० होगी।

टाइटलके चौथे पृष्ठकी छपाई ६५) प्रति अङ्क

वर्ष भर तक टाइटल चौथे पृष्ठकी छपाई २००)रु०

टाइटलके दूसरे तीसरे पृष्ठ की ,, ५०) प्रति अङ्क

वर्षभर तक टाइटलके दूसरे तीसरे पृष्ठ की छपाई १६०) रु०

त्रैमासिक 'श्रीस्वाध्याय' के पृष्ठका आकार २०×३० अठपेजी। कालम स्थान ८×३ इञ्च है।

आधे पृष्ठसे अधिक विज्ञापन देने वालोंको 'श्रीस्वाध्याय' बिना मूल्य भेजा जावेगा। छपाईकी रकम पेशगी प्राप्त होने पर ही विज्ञापन पत्रमें छापा जावेगा।

इस विज्ञापन शुल्कमें किसी प्रकारकी रियायत वा न्यूनताके लिए लिखना व्यर्थ है।

पता—व्यवस्थापक श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन [शिमला]

ग्राहकोंको आवश्यक सूचना

चतुर्थवर्षके 'नववर्षाङ्क' की सब प्रतियाँ समाप्त हैं, अतः अब कोई ग्राहक गत विशेषाङ्क (नववर्षाङ्क) के लिए आर्डर न भेजें। आशासे अधिक माँग आनेके कारण 'नववर्षाङ्क' शीघ्र ही समाप्त होगया और कुछ हमारे पुराने ग्राहकोंको भी (जिन्होंने बहुत विलम्बसे मूल्य भेजा) वह अङ्क नहीं मिल सका, एतदर्थ अब इस 'हेमन्ताङ्क' की प्रतियाँ कुछ अधिक छपवाई गई हैं। जो सज्जन अब ग्राहक होना चाहें वे पूरा वार्षिक मूल्य ३।=) न भेजकर इस पौषके 'हेमन्ताङ्क' से वर्ष समाप्तिके — आषाढ़के — 'ग्रीष्माङ्क' तक तीन अङ्कोंका मूल्य २।) भेज दें; अथवा २॥) की वी. पी. पी. मँगवा लेवें। किसी सज्जनको चतुर्थवर्षके 'नववर्षाङ्क' की अत्यधिक आवश्यकता हो तो कार्यालयकी फाइलकी प्रतियोंमेंसे ५) में भेजा जा सकेगा।

जो नये ग्राहक इस हेमन्ताङ्कसे तीन अङ्कोंके मूल्यके साथ डाक रजिस्ट्री खर्चके ।=) अधिक मिलाकर कुल २॥=) मनीआर्डर द्वारा भेज देंगे, उन्हें तीनों उपहार पुस्तकें और १।) मूल्यका प्रथमवर्षका प्रथमाङ्क बिना मूल्य साथ ही रजिस्ट्रीसे भेजा जावेगा। यह नये ग्राहकोंके लिए विशेष लाभप्रद सुविधा की गई है।

बहुतसे ग्राहक वार्षिक मूल्य भेजते समय मनीआर्डरके कूपन पर अपना नाम पता और ग्राहकसंख्या नहीं लिखते और कई उर्दू में अस्पष्ट अक्षरोंमें लिखते हैं, इससे हमें बड़ी कठिनाई होती और अङ्क भेजनेमें भी विलम्ब हो जाता है। अतः पुराने ग्राहकोंको अपनी ग्राहक संख्या (जो 'श्रीस्वाध्याय' के रैपर — पतेके कागज — पर लिखी रहती है) और नये ग्राहकोंको अपना पूरा पता कूपन पर स्पष्ट अक्षरोंमें लिखना चाहिए।

संस्थाकी ओरसे जो पुस्तकें प्रकाशित हैं या होती हैं,—वे ग्राहकोंको एक ही बार भेजी जाती हैं। प्रतिवर्ष वे ही पुस्तकें दुबारा भेजनेका नियम नहीं है। कागजकी भीषणतम महर्घता और दुष्प्राप्यताके कारण तृतीय वर्षमें संस्थाकी ओरसे कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हो सकी।

'श्रीस्वाध्याय' का नमूना बिना मूल्य किसीको भी नहीं भेजा जाता है। अतः कोई सज्जन नमूनेके लिए वाध्य न करें। यदि एक प्रति (नमूनार्थ) मंगवानी हो तो उसके लिए १=) भेजना आवश्यक है। जिन सज्जनोंके जवाबीपत्र या उत्तरके लिए टिकट आवेंगे उन्हींको संस्थाकी ओरसे उत्तर दिया जायगा। पुराने ग्राहकोंको रुपया भेजते समय कूपन पर अपना ग्राहक नम्बर लिखना आवश्यक है। 'श्रीस्वाध्याय' का प्रत्येक अङ्क प्रकाशित होनेकी तिथि (शुक्ला दशमी) को प्रत्येक ग्राहकके नाम बड़ी सावधानीसे भेज दिया जाता है। यदि किसी ग्राहकके पास न पहुँचे तो पहले अपने स्थानीय पोस्ट आफिस (डाकघर) में पूछताछ करके पोस्ट मास्टरके उत्तरके साथ १५ दिनके अन्दर हमें सूचना देनी चाहिये। इस नियमके विरुद्ध कुछ ग्राहकोंने अबकी बार महीने भरके बाद लिखा कि 'नववर्षाङ्क नहीं मिला' उस समय हमारे पास भी 'नववर्षाङ्क' समाप्त-प्राय था। अतः ऐसे सज्जनोंको हम पुनः सूचित कर देते हैं कि कदाचित् डाककी गड़बड़ीके कारण किसीको कोई अङ्क न मिले तो पहले अपने स्थानीय डाकघरमें पड़ताल करके पोस्टमास्टरके हस्ताक्षरी उत्तरके साथ १५ दिनके अन्दर हमारे पास सूचना भेजदेंगे तो वह अङ्क उन्हें दूसरी बार भेजा जा सकेगा, अन्यथा नहीं।

पत्रव्यवहारका पता—व्यवस्थापक श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन (शिमला)

श्रीस्वाध्यायको—

भारतीय विचक्षणवर्ग किस दृष्टिसे देखता है–

चतुर्थ वर्षके 'नववर्षाङ्क' पर प्राप्त हुई अनेक सम्मतियोंमेंसे कुछ एक महत्त्वपूर्ण सम्मतियाँ निम्न हैं—

भारतके ख्यातिप्राप्त राष्ट्रियनेता, साहित्य इतिहास भाषाविज्ञान अर्थशास्त्रादि अनेक विषयोंके प्रकाण्डपण्डित, बम्बई गवर्नमेण्टके भू० पू० गृहमन्त्री, अ० भा० राष्ट्रभाषा परिषद्के अध्यक्ष श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी महोदय लिखते हैं —

"………………श्रीस्वाध्यायका 'नववर्षाङ्क' मिला। धन्यवाद। अङ्क बहुत अच्छा है। लेख भी विचार प्रवर्त्तक हैं। आपका कार्य पूर्ण रूपसे सफल हो ऐसी आशा है।……………………।"

भारतके अग्रगण्य सुप्रसिद्ध राष्ट्रियनेता, अ० भा० हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके प्राण, युक्तप्रान्तीय व्यवस्थापक सभा (असेम्बली) के भू० पू० प्रवक्ता (स्पीकर) वयोवृद्ध विद्वान् श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन महोदय लिखते हैं—

"…………अभी 'श्रीस्वाध्याय' का 'नववर्षाङ्क' और दो अङ्क पुराने भी मिले। आपके इस पत्रको देख मुझे बहुत सुख मिला — विशेष कर इस कारणसे कि यह सोलनसे निकल रहा है। सोलन तथा उसके निकटवर्त्ती राज्योंमें हिन्दी प्रचारकी आवश्यकताका वर्षोंसे मैं अनुभव करता रहा हूँ। आपका यह पत्र और इसका सञ्चालक-मण्डल इस राष्ट्रिय कार्यमें सहायक होगा; यह मेरी अभिलाषा और आशा है।"

वर्तमान युगके लब्धप्रतिष्ठ रहस्यवादी कवि, नाटककार और समालोचक, अनेकों ग्रन्थोंके यशस्वी लेखक, अ० भा० कवि-सम्मेलनके अध्यक्ष श्री डा० रामकुमार वर्मा M. A. P. H. D. महोदय प्रयागविश्वविद्यालय से लिखते हैं:—

"………………'नववर्षाङ्क' मिला। 'श्रीस्वाध्याय' हमारे साहित्यका ऐसा पत्र है जिस पर हमें अभिमान है। उसमें जो सांस्कृतिक दृष्टिकोण है वह हमें अन्य भारतीय पत्रोंमें नहीं मिलता। हमारे देशके बौद्धिक विकासमें जिन विषयोंका विशेष महत्त्व है, वे आजके युगमें भुला दिए गए हैं। उन विषयोंकी ओर 'श्रीस्वाध्याय' बलपूर्वक हमारा ध्यान आकर्षित करता है। मैं ऐसे पत्रके लिए उन्नतिकी कामना करता हूँ। 'श्रीस्वाध्याय' के प्रत्येक पृष्ठमें मुझे अध्ययन और अनुशीलनसे परिपूर्ण साहित्यिक सामग्री मिली……………।"

हिन्दी संस्कृत गुजराती बंगला और अंग्रेजी साहित्यके सुप्रसिद्ध विद्वान्, 'हिन्दुस्तान' 'रसायन' 'पैसा' 'मोहिनी' 'काव्यकलाधर' के भू० पू० सम्पादक, एलायन्स आफ आनेर लन्दन सोसाइटी आफ साइलेन यूनिटी अमेरिका और पीसप्लेज यूनियन लन्दन के सदस्य, 'मयंकमुखी' 'कलियुगी-कुबेर' 'विद्रोही' आदि कई ग्रन्थोंके यशस्वी लेखक विद्याभूषण श्री पं० मोहन शर्मा जी विशारद लिखते हैं —

"……………प्रस्तुत 'नववर्षाङ्क' को अपनी सम्पादन कुशलतासे आपने जो सर्वोपयोगी रूप प्रदान किया है इसके लिए आप शतशः बधाईके पात्र हैं। शास्त्रीय भूमि पर विविध विषयोंके लेखोंका इतना सुन्दर और बेजोड़ सङ्कलन देख कर हृदय आपकी प्रशंसासे भर उठता है। आपका इस प्रकार उत्तरोत्तर सफल होना आपके अपारपरिश्रम और अदम्य उत्साहका द्योतक है। वर्तमान विषमसमयमें पत्र प्रकाशन और सञ्चालनकी दायित्वपूर्ण परिस्थितिको निभा ले जाना आसान काम नहीं है। आप उसका जिस प्रकार निर्वाह कर रहे हैं, वह आपके ही साहसका काम है। आशा है हिन्दी-संसार 'श्रीस्वाध्याय' के इस नवीन विशेषाङ्कका भरपूर स्वागत करेगा।……………"

स्वाध्यायोऽध्येतव्यः । ❀ श्री ❀ स्वाध्यायान्न प्रमदितव्यम् ।

श्रीस्वाध्याय

[हेमन्तांक]

स्वराष्ट्रशिक्षां गृह्णीयाच्चिकीर्षुः स्वां समुन्नतिम् ।
दूरदृष्टिर्यया भूत्वा न कदाऽपि विषीदति ॥ [राष्ट्रालोक]

वर्ष	सोलन, पौष शु० १० रविवार	संख्या
४	सं० २००१ वि०	२

तत्तद्राष्ट्रे मानवानां व्यवस्थां शोभासम्पच्छालिनीमार्यरीत्या ।
प्रेम्णा लोके स्थापयँस्तत्त्वदर्शी श्रीस्वाध्यायः कल्पतां विश्वभूत्यै ॥

—अ० वा० आचार्य

* श्रीस्वाध्याय-महिमा *

[श्री यज्ञदत्त जी शास्त्री 'रसिक' विद्यावाचस्पति]

वेदैतिह्यसुमार्गमार्गणमतिर्ज्ञानार्जने सुस्पृहा
आकांक्षा कविताकलापकलने राष्ट्रे दृढं प्रेम ते।
धर्मार्थावपि काममोक्षसहितावाप्तुं समीहास्ति चेत्-
'श्रीस्वाध्याय' रसं सदा रसय रे! शून्यैः किमन्यैः रसैः ॥

सत्सामाजिककार्यभार वहने शिक्षां दृढां या ददा-
त्यार्याणां चरितानि बोधसुरभीण्यास्तारयत्यानता ।
सद्धर्मं श्रुतिशास्त्र सम्मतमहो ! या बोधगम्यं तनो-
त्येषा 'श्री' प्रथमा प्रभो ! प्रथयतां 'स्वाध्याय' सत्पत्रिका ॥

सुधार

हमारे राष्ट्रमें अनेकों नेता लोग सुधार कार्यमें व्यस्त हैं। यह सुधारका कार्य बीसों वर्षोंसे चल रहा है। कुछ महानुभाव धार्मिक-सुधार कर रहे हैं, तो कई अपना बहुमूल्य जीवन राजनैतिक सुधारमें व्यतीत कर रहे हैं। कुछ महापुरुष आर्थिक सामाजिक आदि सुधारमें तत्पर हैं। परन्तु इतने महानुभावोंके कठोर प्रयत्न करने पर भी देखा जा रहा है कि भारतीय-जनताकी अवस्था सुधर नहीं रही है। नाही धार्मिक-सुधार सफल हो रहा है और न आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक आदि ही। दारिद्र्यका तो हमारे राष्ट्रमें इस समय शासन चल रहा है। सहस्रों कारखानों, मशीनों और अन्य व्यवसायोंके खुल जाने पर भी हम भारतवासी दिन प्रतिदिन दरिद्र होते जा रहे हैं। कितने ही हमारे भाई बंगालके दुर्भिक्षमें भूखसे मरे, कितने ही भारतमाताके पुत्रोंको पेट-भर भोजन और पहनने के लिए वस्त्र नहीं मिल रहे हैं। कितनी ही भारत सन्तानें उचित आहार-विहार और औषधाभावके कारण मलेरिया ज्वर आदि अनेक रोगोंसे नष्ट हो रही हैं। नगरोंमें स्वच्छताके सुप्रबन्धके अभाव के कारण कितने भारतीय विविध भयानक रोगोंसे ग्रस्त हो रहे हैं। यह सब कुछ दारिद्र्यका दुष्परिणाम है। जिस भारतवर्षमें किसी समय रातको दुकानें तालेके बिना ही रहतीं थीं और देशभरमें कहीं भी चोरीका भय नहीं होता था, उसी देशमें दारिद्र्यके कारण दिन दहाड़े डाके पड़ रहे हैं, इन डाकोंमें प्रायः आधुनिक तथाकथित शिक्षितों का ही हाथ होता है। यह है हमारे आर्थिक-सुधार का फल। धार्मिक सुधारकी भी दशाको जरा देखिये। दिन-प्रतिदिन सहस्रों भारतीय धर्मसे विमुख होते जा रहे हैं। 'कार्लमार्क्स' आदि वैज्ञानिकों के अनीश्वरवाद तथा अधर्मवाद पर हमारे देशवासियोंकी श्रद्धा बढ़ती जा रही है। अनेक बुद्धिमान् हिन्दू भी धर्मको एक व्यर्थ वस्तु समझने लगे हैं। धार्मिकग्रन्थोंका अधिकसे अधिक मुद्रण, प्रकाशन तथा प्रचार होते हुए भी धर्मविषयक श्रद्धा घट रही है। यही दशा हमारे शारीरिक सुधारकी है। अन्य देशोंके लोग अपनी आयु तथा बलको बढ़ा रहे हैं, परन्तु हमारी आयु और काम करनेकी शक्ति उत्तरोत्तर घटती ही जा रही है। हमारे शरीरोंकी ऊंचाई कम होती जा रही है। सारांश यह कि हमारी शारीरिक अवस्था भी सुधरती नहीं दीख रही। सामाजिक बन्धन भी हमारे ढीले हो रहे हैं। जिस सामाजिक संगठनके कारण हिन्दू-जाति कठोर आघातोंको सहन करती हुई भी अपना शिर ऊंचा रख सकी, उसे भी हम खोते जा रहे हैं। संक्षेपसे यही प्रतीत हो रहा है कि सुधारकोंके सभी प्रयत्न व्यर्थ हो रहे हैं और सुधरनेकी अपेक्षा हिन्दु-जनताकी दशा दिनोंदिन बिगड़ती ही जा रही है। इसका क्या कारण है?

कारण इसका एक ही है और वह है स्वाराज्यका अभाव। कहते हैं कि एक बार किसी राजाने एक साम्यवादी (सोशलिस्ट) नेतासे यह प्रश्न किया कि उसकी प्रजामें जो अनेकों दुर्गुण हैं वे कैसे हटाए जा सकते हैं? अर्थात् प्रजाका सुधार कैसे किया जा सकता है? इस प्रश्नका उत्तर राजनीतिज्ञ नेताने यह दिया "अपनी शासन-प्रणाली को सुधारो तो सब कुछ स्वयं सुधर जाएगा"। यह बात सर्वथा सत्य है। जब तक हमारे देशकी शासन-प्रणाली सुधरती नहीं, तब तक हमारा समाज किसी भी प्रकारसे सुधर नहीं सकता। हमारे लिए यह सिद्धान्त कोई नवीन बात नहीं। यह तो हमारे महाभारतमें भी कहा है कि— "राजा कालस्य कारणम्"— अर्थात् राजा ही कालका

कारण है। समय कभी अच्छा तो कभी बुरा आ ही जाता है। जैसे हमारे देशमें पहले-पहले अच्छा समय था परन्तु अब बुरा समय आया है। समय अर्थात् काल तो एक अमूर्त्त वस्तु है। उसने भला अच्छा और बुरा क्या बनना है। उसका तो स्वरूप कभी भी बदलता नहीं। अतः वस्तुतः लोगोंकी दशा अच्छी और बुरी बन जाती है और उसीके सम्बन्धसे हम समयको लक्षणा द्वारा अच्छा बुरा कहते हैं। लोगोंकी दशाके बदलनेका एकमात्र कारण है उनकी शासन-प्रणाली। जिन लोगोंमें शासन-प्रणाली अच्छी हो उनकी दशा सुधरती जाती है, परन्तु जिनमें शासनप्रणाली दूषित हो उनकी दशा भी दूषित हो जाती है। ठीक यही दशा हमारी है। सिकन्दरमहान्के समयमें यदि पश्चिमी भारतवर्षकी शासन प्रणाली अच्छी होती तो इतना बड़ा विजयी सम्राट् भी भारतवर्षमें पैर न रख सकता। हर्षवर्धनके अनन्तर हिन्दु जनतामें शुभ शासन न रहा, इस कारण हमारी दशा बिगड़ने लगी और इतनी बिगड़ी कि सामान्यसे शत्रुने भारत की पुण्यभूमि पर म्लेच्छोंका शासन जमाया। यदि महमूदगजनवी अथवा मुहम्मदगौरीके समयमें भारतकी शासनप्रणाली दूषित न होती तो हिन्दु जनता पारतन्त्र्यकी बेड़ियोंमें फंस कर दुःशासनके कठोर आघातों द्वारा इस दशाको कभी नहीं पहुँचती, जो आजकल दीख रही है। मुसलमानोंके आक्रमणों से लेकर आजतक कभी भी हिन्दुओंको अपने प्रिय भारतवर्षमें अपना सुशासन स्थिर करनेका सौभाग्य प्राप्त न हुआ। उसी कारण हमारी दशा उत्तरोत्तर बिगड़ती गई और अब भी बिगड़ती जा रही है। इसी अभिप्रायसे महाभारतकारने स्पष्ट बताया है कि "राजा कालस्य कारणम्" राजासे यहाँ शासन अभिप्रेत है। चाहे वह राजतन्त्र हो, प्रजातन्त्र हो अथवा व्यक्तितन्त्र हो वा सोशलिस्ट ही क्यों न हो।

ऊपर बताया गया कि हिन्दु जनताके समस्त दुर्गुणोंका कारण है दुःशासन अर्थात् दूषित-शासन प्रणाली। जब तक हमारा शासन सुधरता नहीं, तब तक हमारे सभी सुधारके कार्य निष्फल हो जाएंगे। अतः हमारे सभी सुधारकोंको चाहिए कि सभी मिल कर सर्वप्रथम अपने प्रयत्नों द्वारा अपना शुभशासन अपने देशमें स्थापित करें। ज्यों ही भारतवर्ष पर भारतीयोंका शुभशासन स्थापित होगा, त्योंही हमारी दशा प्रत्येक रूपसे सुधर जायगी। जो कार्य वर्षोंमें भी नहीं बन रहा है वह दिनोंमें बनने लगेगा। इस समय जो शासनप्रणाली हमारे देशमें प्रचलित है, वह भी हमें शिक्षा आदिसे सुधार रही है। परन्तु वह उस प्रकारसे हमें सुधार रही है, जिस प्रकारसे हम सुधर कर उसका कार्य चलानेके योग्य हो जाते हैं। इससे आगे तो वह हमें कभी ले नहीं चलेगी। क्योंकि उससे तो वह अपने ही मूलों पर कुल्हाड़ा मारेगी। उसका भला तो इसीमें है कि हम दीन हीन दरिद्र और दुर्बल ही रहें, जिससे हमें सदा उसकी सहायताकी आवश्यकता रहे और इस प्रकार से हम उसके दास रह कर ही उसका काम चलाते रहें। ऐसी शासनप्रणालीके होते हुए हम कभी भी नहीं सुधरेंगे। इस कारण सुधारकोंको चाहिए कि शीघ्र ही इस दूषित शासनप्रणालीको ही सुधारनेका प्रयत्न करें। ज्योंही रूसमें शासनप्रणाली सुधर गई, त्योंही रूसियोंकी दशा सब प्रकारसे सुधरने लगी और इसी कारण आजके युद्धमें रूसने वह कार्य कर दिखाया जिसका कोई स्वप्न भी नहीं देखता था। हिटलरने जर्मनीमें नाजीशासन स्थापित किया और दश-पन्द्रह-वर्षमें करोड़ों जर्मन पक्के नाजी बन गए। यह शासनकी महिमा है।

हमारे देशमें बहुतसे महाअनुभवी महात्मा भी हैं। जो पुस्तकें आदि लिख कर सुधारमें भाग ले रहे हैं। उनको यह अच्छी प्रकारसे समझ लेना चाहिए कि जब तक हिन्दुओंके पास अपना सुशासन नहीं तब तक उनका धार्मिक सुधार केवल पुस्तकें पढ़नेसे नहीं होगा। अतः उन महापुरुषोंको भी सर्वप्रथम आर्यसुशासन स्थापित करनेका प्रयत्न करना चाहिए। महात्मा लोग कर बहुत कुछ सकते हैं। आत्मज्ञानको प्राप्त करनेसे कठिनतर कोई और काम नहीं। जब उसे भी महात्मा लोग प्राप्त

पशुपति

[लेखक—श्री पं० बलजिन्नाथ जी शास्त्री, बी० ए०]

पशुपतिके विषयमें कुछ कहनेसे पहले यह आवश्यक है कि 'पशु' शब्दकी व्याख्या की जाए। 'पशु' शब्द संस्कृतके बन्धनार्थक 'पाश्' धातुसे बनता है। जो बान्धा जाए उसको संस्कृत में 'पशु' कहते हैं। गाय घोड़े आदिको इसी कारण पशु कहा गया है। दर्शन-विद्यामें हम जीवको पशु कहते हैं। क्योंकि जीव भी अविद्या आदि क्लेशों में कर्मके बन्धनसे बन्धा रहता है। जिसकी शक्ति से यह जीव बन्धा रहता है वही पशुपति है। वस्तुतः देखें तो 'पशु' भिन्न नहीं और 'पशुपति' भिन्न नहीं। दोनों एक ही हैं। परन्तु अनन्तशक्तिपरिपूर्ण पशुपतिकी एक शक्ति है मायाशक्ति। इसी माया-शक्ति द्वारा पशुपति अपनेको कल्पना द्वारा बान्ध लेता है और अनन्त पशुओंको उल्लासित करता है। फिर स्वयं पतिरूपमें इन अपने ही पशु-रूपोंसे बन्ध-मोक्ष तथा सृष्टि-स्थिति-संहार-विधान और अनुग्रहकी क्रीड़ा करता है। यह क्रीड़ा ही उसका परम आनन्द है। इस क्रीड़ाको बन्ध-मोक्ष क्रीड़ा कहा जाता है। सृष्टि स्थिति आदि इस क्रीड़ा के अङ्ग हैं। इन अङ्गोंको पञ्चकृत्य कहते हैं। इन पञ्चकृत्यों द्वारा पालन करके अन्तमें पशुको पंचम-कृत्य द्वारा ज्ञान देकर आत्मप्रत्यभिज्ञाकी दशा तक पहुँचा देता है। उस समय कल्पित भेद अवास्तविक प्रतीत होता है और पशु तथा पशुपति दोनों के अद्वैत का प्रकाश होता जाता है। इस प्रकारसे इन पशुओंका पालन करने ही के कारण हम भगवान् को पति कहते हैं। (पातीति पतिः) इसी कारण यजुर्वेद में विश्वमूर्ति भगवान् रुद्र की "पशूनां पतये नमः" इस प्रकारसे स्तुति की है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में भी —

"मायां तु प्रकृतिं विद्धि मायिनं तु महेश्वरम्"।

इस मन्त्रमें पशुपतिकी मायाशक्तिका उल्लेख किया गया है। माया उस शक्तिका नाम है जिससे अभेदमें भेद तथा भेदमें अभेदका आभास होता है। मायाशक्तिसे एक परमेश्वरमें ही ज्ञातृ ज्ञान ज्ञेय आदि रूपसे भेद प्रकाशित होता है। इसी भेदप्रकाशन सामर्थ्य पर इन अनन्त ब्रह्माण्डोंकी प्रतिष्ठा है। इस प्रकारकी भेद-प्रथाके प्रथित होने पर भी वास्तविक अभेद अप्रथित नहीं हो जाता। वह तो सर्वदा प्रकाशमान ही रहता है। उस अभेदरूप परमेश्वर के प्रकाशसे ही तो यह भेदरूप सृष्टि प्रकाशित होती है। उपनिषत्में भी कहा है—

"तमेवभान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥"

इस भेदप्रथामें पुनः भगवान् पशुपति अनुग्रह द्वारा अभेद प्रकाशन करते हैं। यह सारा उनके स्वातन्त्र्यका उल्लास है। इस प्रकारके स्वातन्त्र्य हीको मायाशक्ति कहते हैं। यही माया पशुके बन्धनका वास्तविक पाश है। बांधा जाता है 'पशु' और बांधने वाला है 'पशुपति'। 'भला परमेश्वर इस प्रकारके कार्य करता ही क्यों है ?' ऐसा प्रश्न तो करना नहीं चाहिए। क्योंकि परतन्त्रतामें ही 'क्यों' को अवकाश मिल सकता है। स्वातन्त्र्यके शब्दकोशमें तो "क्यों"

कर सकते हैं, तो क्या आर्यशासनको स्थापित नहीं करा सकते ? महात्मा गान्धी जी इसी कारण राजनैतिक क्षेत्रमें इतना कुछ कार्य कर रहे हैं। परन्तु उनके कार्यक्रममें नीतिकी कुछ त्रुटि है; इसी कारण उनका प्रयत्न सफल नहीं हो रहा है। अन्य महात्माओंको चाहिए कि शक्तिसञ्चय करके राजनैतिक क्षेत्रमें उतर आएं और इस त्रुटिको पूरा करें।

के लिए कोई भी स्थान नहीं। यदि स्वातन्त्र्यमें भी क्योंको अवकाश मिले तब वह स्वातन्त्र्य ही कैसा ? वह तो उल्टा पारतन्त्र्य बन जाएगा। दूसरी बात यह है कि इस प्रकारके समस्त कार्योंके करनेमें जो पूर्ण स्वातन्त्र्य है वही तो परमेश्वरका वास्तविक स्वरूप है। अतः यह स्वातन्त्र्यका स्वभाव ही है। इस बन्धमोक्षकी विचित्र क्रीड़ामें प्रायः प्रत्येक बुद्धिमान् पशुपाशसे छूटना चाहता है। अतः बुद्धिमानोंको चाहिए कि वे अपने वास्तविक स्वरूपको पहचान कर बन्धनसे छूट जाएं और पशुताको छोड़कर पशुपति बन जाएं।

वैदिक कालसे हमारे पूर्वज पशुपति भगवान्‌की उपासना करते आए हैं। मोहञ्जोदारोंके खण्डहरों में भगवान् पशुपतिका एक पत्थरका चित्र भी मिला है। अतः ५००० वर्ष ई० पू० भी सिन्धु प्रान्तमें पशुपतिकी उपासना होती थी। दक्षिणमें तो पाशुपत नामक एक सम्प्रदाय भी है। भगवान् हमारे देश पर ऐसा अनुग्रह करें कि हमारे देशके अधिकसे अधिक निवासी पशुपतिकी उपासना द्वारा अपने पशुपति स्वरूपकी प्रत्यभिज्ञा प्राप्त करते रहें।

शिक्षा और श्रद्धा

[लेखक— व्याकरणाचार्य श्री पं० मनोहरलाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ एम० ए०]

अतीतकी आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक अनुभूतियाँ विस्मृतिके गर्तमें न पड़ जाएं। इसलिए पूर्वजोंने अपने ज्ञानकी (आनेवाली सन्तानके लिए) थाती सौंपनेका एक उत्तम प्रकार निकाल ही लिया; यही जातिका साहित्य है।

यह एक मानवका अद्भुत रचनात्मक चमत्कार है। पूर्वजोंकी स्मृतियां भी इन बिखरे अनुभवोंके स्वरसे ही आज हृदयहीनोंमें अतिव्याकुलोंमें नम्रताके भाव फूंक रही हैं। आने वाली सन्तानें उन अनुभूतियोंसे लाभ उठाये, यही एकमात्र अभिलाषा उन पूर्वजोंकी रही होगी।

अब यह काम शिक्षाका है कि मानवको इस योग्य बना दे कि वह अतीत अनुभूतियोंको वर्तमानकी कसौटी पर कस कर उनमें यथोचित काट-छाँट कर सके और जितने अंशको हृदय तथ्य मान ले उसीके अनुसार अपने जीवनको बनाए, यही तो जीवन-निर्माण कला है। ऐसा देखा गया है कि अतथ्यको तथ्य तथा तथ्यको अतथ्य मान कर लोगोंने अपने जीवन-मार्गका निर्माण किया और अवसानमें पश्चात्तापके आँसुओंमें प्राणोंको भिगो कर संसारसे विदा हुए। यह उनके पूर्व निश्चयकी कमी ही कही जा सकती है।

अब रहा जीवन पर विचार, सो चमक भरा जीवन ही जीवन हो ऐसा समझना भूल है, कमसे कम भारतीय दृष्टिकोणसे। अधिक प्रायः वे ही फूल चमकते हैं जो निर्गन्ध होते हैं, जैसे ढाक। ऐसे फूल चमकते चाहे कितने ही हों पर प्रकृतिको उनकी ठोस देन बड़ी थोड़ी होती है, इसी प्रकार सात्विकता हीन जीवनमें भी बलिदानकी शक्ति कम होनेके कारण समाजके लिए कम उपकार क्षमता होती है, इन सारी बातोंके कहनेसे तात्पर्य इतना ही है कि जीवनकी यथार्थता समझना ही शिक्षाका चरम लक्ष्य है। और वर्तमानमें यदि यह नहीं है तो होना चाहिए।

अब प्रश्न यही रह जाता है कि इस प्रकारके जीवन निर्माणमें बाधायें क्या हैं ? ऐसा कहना कि यह सारी कमी शिक्षाकी ही है, पक्षपात है। मानविक शिक्षामें भी कमी है पर क्या शिक्षा ग्रहण

करने वाले आज वैसे ही जिज्ञासु तथा जिगृक्षु हैं जितने युधिष्ठिर थे ? क्रोध न करनेसे अभ्युदय मिलता है इसका जब तक क्रियात्मक अनुभव नहीं किया तब तक युधिष्ठिर महाराज तो उसी पाठ पर स्थिर रहे।

इधर तो प्रातःकालसे सायंकाल तक जो कुछ पढ़ते, सुनते, लिखते हैं, उसमें तथा हमारे वास्तविक जीवनमें इत्तना अन्तर है कि यह भेदकी खाही कभी पाटी जा सकेगी — यह दुष्कर प्रतीत हो रहा है।

हाँ — तो वह कारण क्या है ? यह प्रश्न तो अभी ज्योंका त्यों है। दो शब्दोंमें वह बाधक कारण अश्रद्धा है। तर्क तथा आलोचनाके भड़कीले प्रभावने विद्यार्थीके हृदयको अशान्त एवं अव्यवस्थित बना दिया है। जिस प्रमेय अथवा वस्तुको आशाकी दृष्टिसे सत्यापन (realisation) करना चाहता है उसीको पश्चात् अश्रद्धासे छोड़ देता है। जिस शाखा पर उसका हृदय विहंग बैठना चाहता है वही शाखा उसीके अश्रद्धा भारसे नीचे झुक जाती है। इस प्रकार समस्त प्रमितियोंमें उसको कहीं आधार नहीं रहता। परिणामतः ऐसे मानवका जीवन वैसा ही रह जाता है जैसा कि प्राक्-ऐतिहासिक असभ्यकालमें रहा होगा। पुनश्च अश्रद्धा सम्पन्न हृदय में गुण-ग्राहकता शक्ति दुर्वल होती है। वस्त्रको रंगनेसे पूर्व उसे धोबीसे इसीलिए धुलाते हैं कि मैल उस पर रंग नहीं चढ़ने देता। हृदय श्रद्धाके जलमें धोये जाते हैं और कपड़े तालाबमें। पूर्वके ऋषि लोग छात्रको उपदेशक बनानेमें जितना समय लगाते थे उतना उपदेश देनेमें नहीं। बल्कि 'एकलव्य' — तो श्रद्धामात्रके बल पर स्वनिर्मित अनुशासनमें रह कर अद्वितीय धनुर्धर बन गया था। निरुक्तकार यास्काचार्य एक बड़े अनुभवी शिक्षाशास्त्रज्ञ थे। उन्होंने तो यहाँ तक लिखा है — "जो श्रद्धालु शिष्य न हो उसे पढ़ाना ही नहीं चाहिए।" और यह बहुत सीमा तक ठीक है। कक्षामें अध्यापक कहता है कि दक्षिणी ध्रुवके पास लोग बरफके मकानोंमें रहते हैं। विद्यार्थी विश्वास नहीं करता तो क्या अध्यापक दक्षिणी ध्रुवको यहाँ उठा लायेगा वा छात्रको वहाँ ले जायेगा ? दोनों उपाय सम्भव नहीं।

तो क्या इन सबसे हम यही अनुमान कर बैठें कि आज जितना शिक्षा कम प्रभाव डाल रही है वह छात्रोंके हृदयकी अश्रद्धाके ही कारण है। पर वे बूढ़े बाबाजी तो होते नहीं। वे तो सच्चे प्रकृतिके पुत्र हैं। स्कूल कालिजोंमें ही वे दीक्षित होते हैं। ये स्कूल उन्हें श्रद्धा दें चाहे अश्रद्धा। तब तो सारा दोष शिक्षकोंका ही हुआ। इतना कहनेमें किसीको संकोच नहीं होना चाहिए कि आजकलके शिक्षकोंका वैयक्तिक नैतिक-जीवन तथा शिक्षक-जीवनमें महान् अन्तर दीख पड़ता है। यही उनके प्रति एकमात्र अश्रद्धाका कारण बन जाता है। अश्रद्धेयकी ज्ञान-सम्पत्ति भावी सन्तान के लिए उतनी ही उपादेय है जितना प्यासोंके लिए समुद्रका पानी। जल अपने दोषोंसे दूषित है तो ज्ञान ज्ञानवान्के दोषोंसे। इसलिए सब से पहिले शिक्षकोंका वैयक्तिक जीवन तथा शिक्षक जीवन एक हो और सात्विक हो। कुछ लोगोंकी ऐसी धारणा है कि वैयक्तिक जीवनमें शिक्षक स्वतन्त्र है—यह बड़ी हानिप्रद हो रही है। यदि रेलवे दफ्तरका क्लर्क ऐसा कहे कि 'मैं दफ्तरका काम पूरा कर घर पर चाहे कुछ करूं' कथंचित् ठीक हो सकता है, क्योंकि उसका वैयक्तिक जीवन गाड़ियोंके आने जानेमें किसी प्रकारकी अड़चन नहीं पैदा करता। पर शिक्षकोंके जीवन तो छात्रों के जीवनके निर्माण हेतु हैं। उनके ऊपर न केवल अपने अपितु दूसरोंके जीवन-निर्माणका भार है। बल्कि यही उनका शिक्षकत्व है। छात्र जैसे पुस्तकें पढ़ते हैं उसी प्रकार अपने शिक्षकोंका जीवन भी। इसलिए यदि शिक्षक सुखलालसाके वशीभूत अपने जीवनको सात्विकताहीन करेगा तो उसके सब छात्रोंका जीवन भी अवश्य उससे प्रति-

(शेष पृष्ठ १४ पर)

पंचांग-संशोधन

[लेखक—श्री पं० हजारीप्रसाद जी द्विवेदी सम्पादक 'विश्वभारतीपत्रिका']

[लेखक हिन्दी संस्कृत बंगला और अंग्रेजो साहित्यके सुप्रसिद्ध मर्मज्ञ विद्वान् तथा ज्योतिश्शास्त्र एवं धर्मशास्त्र-के भी प्रगाढ़ पण्डित हैं। इस समय आप शान्तिनिकेतन (बंगाल) हिन्दीभवनके अध्यक्ष और त्रैमासिक 'विश्वभारती-पत्रिका' के यशस्वी सम्पादक हैं। आपने इस लेखमें पञ्चाङ्गके सम्बन्धमें जो विचार व्यक्त किये हैं, इन पर निष्पक्ष विद्वान् शान्तस्वान्तेन उदारतासे विचार करेंगे तो उन्हें ज्ञात होगा कि वर्तमान समयके अनेकों भारतीय पञ्चाङ्गोंमें किस प्रकारकी मनमानी चल रही है। आजसे ४ वर्ष पूर्व 'श्रीस्वाध्याय' के प्रथमवर्षके प्रथमाङ्कमें ही हमने सप्रमाण प्राचीन स्थूल गणितके पञ्चाङ्गोंकी अनुपादेयता सिद्ध करके सर्वाङ्ग शुद्ध पञ्चाङ्गकी आवश्यकता प्रकट की थी। उत्तर भारतमें इस अभावकी पूर्तिके लिए हमने श्री पं० कृष्णचन्द्रजी ओझा केतकीपञ्चाङ्गकर्ताके सहयोगसे सं० २००२ का सूक्ष्मगणनानुसार केतकीसे सर्वाङ्गशुद्ध पञ्चाङ्गका निर्माण किया है, जो शीघ्र ही प्रकाशित हो रहा है। आगामी अङ्कमें विद्वान् लेखकका दूसरा लेख "ज्योतिष और धर्मशास्त्र" शीर्षकसे प्रकाशित होगा। —सम्पादक]

यूरोपियन-ज्योतिष और भारतीय-ज्योतिषका विकास दो भिन्न मार्गोंमें हुआ है, इसलिए दोनोंमें प्रकृतिगत पार्थक्य रह गया है। भारतीय ज्योतिषका विकास ही नाना प्रकारके आचार-विचार, परम्परागत रीति नीति, व्रत-उपवास आदिकी स्मृतिरक्षाके लिए हुआ है। इसलिए भारतीय पञ्चाङ्ग इसी लक्ष्यसे बनते हैं कि उनके द्वारा उक्त घटनाओं, व्रतों, उपवासों आदिका यथार्थक,ल निश्चित किया जाय। इसके अतिरिक्त शुभकर्मोंकी भी एक परम्परा है। जिस दिन, जिस नक्षत्र, जिस राशिमें आज भारतीय विवाह हो रहे हैं, सहस्रों वर्षोंसे उसीमें हो रहे हैं। भारतीय ज्योतिषकी प्रकृतिके साथ ये बातें इस प्रकार घुलमिल गई हैं कि उनको अलग करके सोचना भारतीय पण्डितके लिए असम्भव है। परन्तु वह इन बातोंके कारण सायन-गणना (या आधुनिक यूरोपीय गणना) के प्रचारका विरोधी नहीं है। गणना जितनी ही शुद्ध होगी, उतनी ही यथार्थताके साथ वह ग्रह-राशि-नक्षत्रोंका निर्णय कर सकेगा। पर नाना कारणोंसे वह पहली राशिको मेष और पहले नक्षत्रको अश्विनी कहनेको वाध्य है। तभी उसकी परम्परा सुरक्षित रहेगी। यदि सायन-गणना प्रचलित कर दी जाय, तो आज जो राशि पहली है वह कल दूसरी हो सकती है और फिर एक युगके अनन्तर तीसरी। क्योंकि सम्पातबिन्दु निरन्तर पीछे खिसकता जायगा। फिर संक्रान्ति, अधिमास, क्षयमास आदिमें इतना अधिक उलट-पलट होगा कि भारतीय ज्योतिषकी प्रकृति उसे सहन नहीं कर सकेगी।

यह ध्यानमें रखना चाहिए कि शुद्ध वर्षमान क्या पदार्थ है। आकाशमें जो बिन्दु स्थिर है, उस बिन्दुसे चलकर एक पूरा चक्कर लगाकर जब पृथिवी उसी बिन्दु पर आजाती है, तब एक वर्ष पूरा हुआ कहना चाहिए। पृथ्वीके घूमनेके कारण हम सूर्यको चक्कर लगाते हुए देखते हैं, इसलिए व्यवहारमें सूर्यकी गणना ही की जाती है। हम सूर्यको ही एक राशिसे दूसरीकी ओर खिसकते देखते हैं, इसलिए यहाँ भी हम सूर्यका चलना ही कहते रहेंगे। अब सूर्य किस बिन्दु परसे चल रहा है, यह तो स्थिर नहीं है। सम्पात-बिन्दु परसे सम्पात-बिन्दु पर यदि वह आ जाय तो वह पूरा चक्कर नहीं लगा सकेगा, क्योंकि वर्षभरमें सम्पात-बिन्दु थोड़ा-सा पीछे खिसक आया रहेगा, इसलिए यह स्थान ठीक नहीं है। किन्तु उपाय यही भर नहीं है।

एक और बिन्दु है जहाँसे सूर्यकी गणना की जा सकती है। सूर्यकी गति प्रतिदिन बराबर नहीं होती, इसीलिए उसकी एक औसत गति मान लेते हैं। सूर्य, मान लीजिए, एक दिन अपनी औसत गति के बराबर चला। अब सालभर उसकी गति बढ़ती-घटती रहेगी; फिर जब औसत गति वाले स्थान पर आएगा, तो निश्चित है कि गति-सम्बन्धी सारी जटिलताओंको पार करके वह ठीक जगह पर आगया। इस स्थानसे भी वर्ष नापा जा सकता है; पर कठिनाई यह है कि यह भी चला करता है सम्पातकी उलटी दिशामें। इसपरसे जो वर्ष निकाला जायगा, उसमें सूर्यको एक चक्करसे कुछ अधिक चलना पड़ेगा। अब यद्यपि उदयास्त आदिके लिए ये मान ठीक होंगे; पर उसको एक चक्कर पूरा करनेका काल नहीं कह सकते। एक तीसरा मार्ग भी है। नक्षत्रगण प्रायः स्थिर हैं। यदि किसी एक नक्षत्रको स्थिर कर लें और सूर्य वहाँसे आरम्भ करके चक्कर काटता हुआ फिर वहीं पहुँच जाय तो, कहेंगे कि यह मान अपेक्षाकृत शुद्ध है। इसीको नाक्षत्रमान कहते हैं। भारतीय पण्डितोंने इसीको माना है। वे उदयास्त आदि कर्मोंके लिए इसीमें अयन-सम्पात सम्बन्धी और उच्च सम्बन्धी गति जोड़ और घटाकर काम चला लेते हैं; पर नक्षत्रोंको स्थिर रखते हैं। यह मार्ग बहुत सुविधाका है। इससे बहुत परिश्रम बच जाता है और भारतीय परम्पराकी रक्षा भी होती है।

ग्रीनविचके ज्योतिषी जो पत्रा बनाते हैं, उसमें नाक्षत्रमान नहीं देते, बल्कि उसमें सम्पातकी गति और उच्चकी गतिका संस्कार करके देते हैं। हमारे देशमें इसीको सायन-मत कहा जाता है। इससे ग्रीनविचवाले ज्योतिषियोंको ग्रहोंकी गणनामें तो बड़ी सुविधा पड़ती है, पर नक्षत्रस्थान ठीक करनेके लिए प्रतिवर्ष गणना करनी पड़ती है। ६५० पृष्ठके पत्रेमें २२८ पृष्ठ इन अनेक नक्षत्रोंकी गणनामें लगाए जाते हैं! भारतीय पञ्चाङ्गोंको इतनी झंझटकी आवश्यकता नहीं होती।

इसीलिए मैं निरयन गणनाका पक्षपाती हूँ।

परन्तु सायन और निरयणका अन्तर अयनांश है। और अयनांशके विषयमें भारतीय पण्डितोंमें "नासौ मुनिर्यस्य मतं न भिन्नम्"। मैंने सन् १९३८ में सात विभिन्न पञ्चाङ्गोंकी तुलना करके देखा कि कोई भी दो पञ्चाङ्ग एक ही अयनांश नहीं मानते। दो एक उदाहरण देता हूँ। सन् १९३८ में निम्नलिखित पञ्चाङ्गोंके अयनांश इस प्रकार थे —

विश्वपञ्चाङ्ग (काशी)	२२°	५३′	२५″
तिलकपञ्चाङ्ग (पूना)	१९°	०′	०″
विशुद्धसिद्धान्त पञ्जिका— (कलकत्ता)	२२°	५९′	२४″६५
गुप्तप्रेस पञ्जिका (कलकत्ता)	२१°	१५′	०″
नाना-दाते-पञ्चाङ्ग (पूना)	२३°	३०′	०″
भारतविजय पञ्चाङ्ग (इन्दौर)	२२°	५९′	०″
दृग्गणित पञ्चाङ्ग (मद्रास)	२२°	५९′	३″
ग्रहलाघवीय पञ्चाङ्ग	२३°	३६′	०″

ऐसा ज्योतिषी शायद ही हो जो यह न जानता हो कि ज्योतिषशास्त्र (मेरा मतलब गणित ज्योतिषसे है) ग्रह-नक्षत्रोंकी विद्या है। भारतवर्षके नाना स्थानोंसे नाना मतोंके अनुसार पञ्चाङ्ग निकालनेवाले ज्योतिषी यह निश्चित जानते हैं कि उनका पञ्चाङ्ग किसी-न-किसी प्रकार आकाशसे अवश्य सम्बन्ध रखता है। वे यथासाध्य चेष्टा करते हैं कि उनके बताए हुए ग्रहण, उदय, अस्त सबको यथासमय प्रत्यक्ष दीखें, उनके बताए अनुसार चन्द्रदर्शन हो, सूर्योदय हो, इत्यादि। परन्तु बहुतसे ज्योतिषी यह नहीं मानते कि पञ्चाङ्गका उद्देश्य केवल आकाशमें यथास्थान ग्रहों या ज्योतिषिक-बिन्दुओंका दिखाई देना ही है। यह एक अद्भुत विरोधाभास है, पर है सच।

कहते हैं, ज्योतिषशास्त्र प्रत्यक्ष विद्या है, सूर्य और चन्द्रमा इसके साक्षी हैं — "प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ।" फिर इस शास्त्रमें दृश्य और अदृश्य गणना, चैत्र और रैवत पक्ष, सौर और ग्रहलाघवीय मत, इन दो-दो मतोंका स्थान ही नहीं होना चाहिये। गणना दो प्रकारकी हो सकती

है; अर्थात् किसी अभीष्ट फलकी प्राप्ति दो प्रकारसे हो सकती है, किन्तु यह समझमें नहीं आता कि फल दो प्रकारके कैसे हो सकते हैं। यदि कोई कहे कि १५×१४=२१० यह फल दो प्रकारकी गणनाओंसे आ सकता है [उदाहरणार्थ, १५×(१०+४) और १५×२×७] तो उसकी बात समझमें आ जायगी। परन्तु यदि कहनेवाला यों कहे कि गुणनफल दो प्रकारका होता है शुद्ध और अशुद्ध, तो बुद्धिमान् मनुष्य उसकी बात सुनने-योग्य नहीं समझेंगे।

ग्रन्थोंको लेकर अपने अपने मत खड़े करनेवाले पंडित भी न जाने क्या सोचते होंगे। सच्चा ज्योतिषी किसी ग्रन्थको, वह कितना ही प्राचीन या कितना ही नवीन क्यों न हो — प्रमाण नहीं मानता। यदि ग्रन्थ प्राचीन है तो वह उसे आदरकी दृष्टिसे देखेगा पर उसके मतको बिना युक्तिकी कसौटी पर कसे नहीं मान लेगा। वराहमिहिरने दो अत्यन्त प्राचीन सिद्धान्तोंको 'दूर-विभ्रष्ट' कहकर उपेक्षाकी थी, भास्कराचार्यने जोर देकर कहा था, यह ज्योतिषशास्त्र अनन्त काल तक नूतन बनता रहेगा। ग्रहलाघवके आचार्य श्रीगणेश दैवज्ञ ने प्राचीन सिद्धान्तोंकी फिरसे जांच की थी और जो बातें स्थूल या अशुद्ध ज्ञात हुई, उन्हें स्पष्ट शब्दोंमें अशुद्ध कहकर त्याग दिया। स्व० पं० सुधाकर द्विवेदीजी ने गणेश दैवज्ञकी जांचकी भी जांच की थी। इसलिये यह नहीं कहा जा सकता कि कोई ग्रन्थ या आचार्य ज्योतिषीके लिये उसके मार्गका रोधक सिद्ध होगा।

भारतीय ज्योतिषका धर्मशास्त्रसे गहरा सम्बन्ध है। पर यह कहना बिल्कुल असंगत है कि अकेले भारतवर्षमें ही ज्योतिष और धर्मशास्त्रका सम्बन्ध रहा है। मिश्रमें ज्योतिष और धर्मकृत्योंका बड़ा भारी सम्बन्ध था; कैल्डिया और बैबिलोनिया, ग्रीस और रोम, ईरान और अरब इन सभी देशोंमें ज्योतिष और धर्मका गहरा सम्बन्ध था, कितनी ही जगह अब भी है। ज्योतिष और धर्मशास्त्रका गाढ़ सम्बन्ध न तो हिन्दुस्थानमें अकेला है और न गर्व करनेका ही विषय है। ज्योतिष और धर्मशास्त्रमें सम्बन्ध हुए बिना रह नहीं सकता। अत्यन्त जङ्गली जातियां भी ज्योतिषिक पर्यवेक्षणसे अपने धार्मिक अनुष्ठानोंका पालन करती हैं। किंतु ज्योतिष और धर्मशास्त्रके सम्बन्धसे भारतवर्षके एक श्रेणीके ज्योतिर्विद्-मण्डल में एक समस्या खड़ी हो गई है। ये लोग समझते हैं कि प्राचीन कालसे जिस ग्रन्थके आधार पर वे गणना करते आ रहे हैं, वह ग्रन्थ ही धर्मकृत्योंका एकमात्र सहारा है। यह बात चिन्त्य है।

ज्योतिष और धर्मशास्त्रके सम्बन्धमें एक लक्ष्य करनेकी बात यह है कि जहाँ तक गणनाका सम्बन्ध है, धर्मशास्त्र सदा ज्योतिषका अनुवर्तन करता आया है। स्वतन्त्र रहा है ज्योतिष। ज्योतिष यदि शुक्रवारके दिन ५० दण्ड एकादशीका निर्देश करे तो धर्मशास्त्र को इसे मानना ही पड़ेगा। यह दूसरी बात है कि स्मार्त्तोंकी एकादशी एक दिन हो, वैष्णवोंकी दूसरे दिन, — धर्मशास्त्रको इस विषयके निर्णय करनेका पूरा अधिकार है — पर, यह नहीं हो सकता कि ज्योतिषके निर्णयमें धर्मशास्त्र बाधा दे। धर्मशास्त्र विश्वासके ऊपर प्रतिष्ठित है, ज्योतिष युक्तिके ऊपर। ज्योतिषको पूरा अधिकार है कि आज यदि शुक्रवार वाली एकादशीके भोगमें जो ५० दण्ड पड़े हैं तो कल इससे अधिक विशुद्ध गणनाके बल पर बदलकर ४४ दण्ड कर दे। यदि धर्मशास्त्रको इस निर्णय परसे अपनी व्यवस्था बदलनी पड़े तो कुछ चिन्ता नहीं। धर्मशास्त्रके लिये ज्योतिष नहीं रुक सकता।

हमारे पंचांगोंमें चैत्र और रैवत पक्षका जो गज-कच्छप युद्ध चल रहा है वह बन्द होना चाहिए। इसका न तो ज्योतिषसे गहरा सम्बन्ध है और न धर्मशास्त्र से। जिन देशोंमें अयनांश नहीं है — संसारमें वह भारतवर्षके सिवा और कहीं भी नहीं है — वहां ज्योतिषकी उन्नति और अग्रगतिमें कोई बाधा नहीं पहुँची है। अयनांशका अधिक सम्बन्ध परम्परासे है। ज्योतिषसे इसका यही सम्बन्ध है कि निरयण गणना यदि प्रचलित रहेगी तो शताब्दियोंसे हमारे पूर्वज जिस मेषको 'मेष' (या राशिचक्रकी प्रथम राशि) कहते आ रहे हैं, उसे हम भी भविष्यमें

ज्यों-का-त्यों कहते रहेंगे। अर्थात् हमारी परम्परा द्वारा समर्थित बातें ज्यों-की-त्यों रह जायेंगी। धर्म-शास्त्रसे इसका इतना ही सम्बन्ध है कि वर्षोंसे हम जिस तिथिके आस-पास संक्रांति आदि मानते आ रहे हैं उसे वहीं मनावेंगे अर्थात् हमारी परम्परा ज्यों-की-त्यों बनी रहेगी। सच पूछिये, तो अयनांश एक कल्पित ज्योतिषिक तथ्य है। खूब संभव, अत्यन्त प्राचीन कालमें हमारे पूर्वजोंमें इसका चलन ही न था, फिर भी मैं स्वीकार करता हूँ कि आज हम अयनांशको छोड़ नहीं सकते। ऊपर हमने देखा है कि हमारा ज्योतिषशास्त्र विचित्ररूपमें उससे उलझा हुआ है। पर हमें इसके महत्त्वकी ठीक ठीक धारणा होनी चाहिए।

मेरी रायमें किसी सर्वमान्य ग्रन्थके किसी सर्व-मान्य नियमसे किसी सर्वमान्य तिथिको अयनांश निर्णय कर लेना चाहिए। फिर उसे विशुद्ध अयन-गतिसे चलाना चाहिए। मैं सूर्यसिद्धान्तके उस नियमकी ओर पण्डित-मण्डलीका ध्यान आकर्षित करूंगा जिसमें वेधागत और ग्रन्थागत सूर्यके अन्तर परसे अयनांश ठीक करनेकी बात बताई गई है। स्व० पं० सुधाकर द्विवेदी इस मतको मान्य समझते थे। काशी-विश्वविद्यालयका पंचांग उसी नियमसे अयनांश स्थिर करता है।

पंचाङ्ग-एकीकरणके अवसर पर मूल विषयको ढक देनेवाली बातें नहीं होनी चाहिए। वह समय अब लद गया जब कि केवल लाखों वर्षों की प्राची-नताके बल पर ही लोगोंको प्रभावित किया जा सकता था। किसी संहिता या भाष्यका काल कितने लाख वर्ष पुराना है, यह बात ज्योतिषिक समस्याओं का समाधान नहीं करेगी।

इस अङ्कमें स्थानाभावसे हम इस विषय पर अपना विचार नहीं दे सके। परन्तु अगले अङ्कमें हम ऐसा करनेका प्रयत्न करेंगे। हम इतिहास प्रेमी विद्वानोंका ध्यान इस महत्त्वपूर्ण विषयकी ओर आकृष्ट करते हैं।

शिक्षा और श्रद्धा

[पृष्ठ १० का शेष]

बिम्बित होगा। शिक्षक जीवन एक मौन तप है। इसका उत्तरदायित्व बहुत है। सृष्टिकर्ता जिन गुणोंका आधान कर इस मांस हड्डीके पुतलेको संसारमें भेजता है, उनकी अभिव्यक्ति करना शिक्षक का काम है। इसीलिए तो भगवान्से पूर्व गुरु को प्रणाम किया जाता है। इसलिए अपने लिए नहीं अपितु जातिके लिए शिक्षक अपने जीवनको सात्विक बनाएं और अपने प्रति श्रद्धा उत्पन्न करें। उधर छात्रोंका भी कर्त्तव्य हो जाता है कि ढौंगसे आकृष्ट न हों। अस्थिमांसके पंजर इस मानव देहमें छिपी आत्माको देखें, उसके गुण देखें और हृदय देखें। ऐसे समाजमें कम नहीं हैं जो मदारीकी तरह अपनी ओर लोगोंको खींचा करते हैं। बल्कि आजकल श्रद्धाका उपार्जन भी नेतृत्वके उपार्जनके समान एक कला बन गया है। ऐसे आधुनिक आकर्षणोंसे बचना और सात्विकतामें श्रद्धा उत्पन्न करनी होगी तभी जातिका निर्माण हो सकेगा। संस्कृति एवं जाति का निर्माण माँ-बाप नहीं करते, अपितु थोड़ा-थोड़ा वेतन पाने वाले अध्यापक करते हैं। इस यागमें उनकी मौन आहुतियाँ हैं और त्यागपूर्ण आहुतियाँ हैं, वे तभी सफल होंगी जब शिष्य श्रद्धालु एवं शिक्षक श्रद्धेय होंगे।

—

राशिस्वामियोंकी विशिष्ट-उपपत्ति

[लेखक—राजकुमार गुरु ज्यौतिषालङ्कार श्री पं० तारादत्त जी राजज्यौतिषी]

पञ्चाननाख्यो हि यथेभचक्रे
पञ्चाननाख्यो हि तथा भचक्रे ।
एनं हरिः पालयितुं क्षमोऽस्य
कृतं तदित्येतदगारमाद्यैः ॥
सिंहादिचक्रार्धपती रविः स्याद्
विलोमकीटादिभखण्डपोऽब्जः ।
पतङ्गधाम्ना सविधं तमीशः
स्थातुं कुलीरं त्वकरोदगारम् ।
उच्चोच्चमार्गे भ्रमतां ग्रहाणां
बुधाननानां भवनानि केन्द्वोः ॥

अर्थ—हाथियोंके समूहमें जैसा सिंह होता है, राशिचक्रमें वैसी ही सिंहराशि है। इसके शासन करनेमें सूर्य समर्थ है, इसलिए आदि आचार्योंने इसे सूर्यकी राशि स्वीकार किया है। सिंह आदि छः राशियोंका स्वामी सूर्य और कर्कसे विलोम क्रमसे छः राशियोंका स्वामी चन्द्रमा है। चन्द्रमाने सूर्यके प्रकाशके समीपमें रहनेके लिए कर्कराशिको अपनी राशि स्वीकार किया। ऊंचे-ऊंचे मार्ग पर चलते हुए बुध आदि ग्रहोंकी राशियाँ सूर्य-चन्द्रमाकी राशियोंसे आगे-पीछे नियत हैं।

कक्षाक्रमसे प्रथम ताराग्रह बुधकी मिथुन-कन्या ये दो राशियाँ सूर्य-चन्द्रमाकी सिंह-कर्क नामक राशियोंसे आगे-पीछे हैं। इन बुधकी राशियोंसे आगे-पीछे इसी प्रकार बुधसे ऊपर कक्षावाले द्वितीय ताराग्रह शुक्रकी तुला-वृष ये दो राशियाँ हैं। इसी क्रमसे शुक्रसे ऊपर कक्षावाले ताराग्रह मङ्गलकी वृश्चिक-मेष ये दो राशियाँ। मङ्गलसे ऊपर कक्षावाले ताराग्रह बृहस्पतिकी धनुः-मीन ये दो राशियाँ और बृहस्पतिसे ऊपर कक्षावाले ताराग्रह शनिकी मकर-कुम्भ ये दो राशियाँ हैं।

ये कालिदासीय पद्य 'बृहद्दैवज्ञरञ्जनके' गोचर-प्रकरणसे लिखे हैं। इनमें राशिस्वामियोंकी उपपत्ति स्पष्ट लिखी है। राशि-स्वामियोंकी शास्त्र सिद्ध उपपत्तिके अभिलाषी सज्जनोंके लिए यह उपपत्ति अत्यन्त उपयोगिनी प्रतीत होती है। "राशि-नाथोपपत्तिः कालिदासोक्ता" इस सूत्रके द्वारा ज्योतिष-मीमांसा-दर्शनके परिशिष्टमें भी यही उपपत्ति स्वीकृत की गई है।

स्वगृहमें ग्रह बली होता है। स्वभावकी अनुकूलता के बिना बलका होना असंभव है। इसलिए स्वभावकी अनुकूलता वाली राशि ही स्वराशि हो सकती है। स्वभावकी अनुकूलताका ज्ञान प्रकृति—विचार और क्रम-विचारसे होता है।

"शिरमें जैसा तत्त्व-सम्मेलन है, वैसा ही मेष राशिमें है। इसलिये मेष राशिका शिरका अधिष्ठातृत्व है।" इस प्रकारका विचार प्रकृति विचार है।

शिर और मेष राशिके तत्त्वोंका प्रत्यक्ष रूपसे सूक्ष्म विश्लेषण त्रिकलदर्शी ऋषियोंसे अन्य जनोंका साध्य नहीं है।

जिस समय मेष राशि क्रूर ग्रहोंसे दूषित होती है, उस समय जनतामें उन ग्रहोंके वातादि दोषोंके अनुसार रोग व्याप्त होते हैं। इस प्रकार यत्न-पूर्वक विचारसे चतुर जन भी कुछ अनुसन्धान कर सकते हैं। सूक्ष्म विचार भी योगका ही अंश है।

विश्वशिक्षक सर्वज्ञ विधाताने जिस क्रमसे आकाशमें मेषादि राशियाँ निर्मित की हैं, उसी क्रम से राशियोंके समान तत्त्व-सम्मेलन वाले मनुष्यादि देह भी निर्मित किये हैं। इसलिए "प्रथम अङ्ग शिरका अधिष्ठाता प्रथम राशि मेष, द्वितीय अङ्ग

मुखका अधिष्ठाता द्वितीय राशि वृष" इस प्रकार अङ्गोंके अधिष्ठाता राशियोंका अनुसन्धान सरलता-पूर्वक किया जा सकता है। इस प्रकारका विचार क्रमविचार है।

सभी सृष्टिके कार्य इसी प्रकार क्रमसे नियत हैं। इसलिए राशिस्वामी आदियोंका भी क्रमके बिना होना असम्भव है। जिस क्रमसे राशिस्वामी नियत किये गए हैं; वह लिखित कालिदासीय पद्यों से स्पष्ट है। इन पद्योंमें सादृश्यसे सूर्यका सिंह राशिका आधिपत्य सिद्ध कर चन्द्रमाके सूर्यके प्रकाशसे प्रकाशित होनेसे सूर्यके अनुयायीके सदृश होनेके कारण सूर्यकी राशिसे पीछे चन्द्रमाकी राशि स्वीकार कर अन्य ग्रहोंका शेष राशियोंका आधिपत्य कक्षा क्रमसे दिखाया है।

यहाँ सूर्यका राशि स्वामित्व प्रकृति-विचारसे दिखा कर शेषोंका स्वामित्व क्रम-विचारसे दिखाया है।

रचना-चातुर्यके कारण प्रकृति-विचारसे वैसी ही अनुकूलता सिद्ध होती है, जैसी क्रम-विचारसे।

'बृहद्दैवज्ञरञ्जन' में पूर्वलिखित कालिदासीय पद्योंके समान 'वृद्धयवन-जातक'के पद्य भी हैं —

इदं जगत् स्थावरजङ्गमाख्यं
सर्वं रवीन्द्वात्मकमाहुराद्याः।
तस्योद्भवोऽत्रापचयश्च दृष्टो—
भमण्डलेऽप्येव तदात्मकं तत्॥
तस्यार्धमाद्यं विहितं मघादि
सार्पादिचान्द्रं विहितं परार्धम्।
क्रमेण सूर्यः प्रददौ ग्रहाणां
व्यस्तेन ताराधिपतिस्तथैव॥
बुधस्य शुक्रस्य धरासुतस्य
बृहस्पतेर्भास्करनन्दनस्य।
द्वे द्वे गृहे तेषु यथानुरूपं
फलं विधेयं निपुणं विदग्धैः॥

अर्थ—आदि आचार्योंने दृश्यमान् स्थावर जङ्गम जगत्को सूर्य-चन्द्रात्मक कहा है। उसकी उत्पत्ति और नाश नक्षत्र-मण्डलके अनुसार दृष्ट होता है। इसलिए वह भी सूर्य-चन्द्रात्मक है। उस नक्षत्र-मण्डलका मघा नक्षत्रादि पहिला अर्ध सौर अर्ध कहा है। विपरीत गणनासे अश्लेषादि अर्ध चान्द्र अर्ध कहा है। सूर्यने क्रमसे और चन्द्रमाने विपरीत क्रमसे एक-एक ताराग्रहको दो-दो राशियाँ दी हैं। बुध, शुक्र, मङ्गल, बृहस्पति और शनैश्चर इस क्रमसे वे राशियाँ दी गई हैं। उनके अनुसार यथा योग्य फल प्रवीण पुरुषोंको चतुरता-पूर्वक कहना चाहिए।

वेदस्वरूपनिरूपण

[लेखक— श्री० पं० दीनानाथ जी शर्मा शास्त्री सारस्वत विद्याभूषण विद्यावागीश]

[गताङ्कसे आगे]

ब्राह्मणभागकी अवेदतामें स्वामीजीने अन्य हेतु दिया है—'पुराणेतिहास सञ्ज्ञकत्वात् (१)'। अर्थात् ब्राह्मणभागका नाम पुराण वा इतिहास है, इसलिये वह वेद नहीं। इस विषयमें स्वामीजीने ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिकाके ८४।८५ पृष्ठमें न्यायदर्शन तथा उसके वात्स्यायनभाष्यका प्रमाण दिया है; पर उसका लिखना प्रयासमात्र है, क्योंकि न्यायदर्शनकर्ता श्री गौतम तथा भाष्यकर्ता श्री वात्स्यायन दोनों ही ब्राह्मणभागको वेद मानते हैं; और पुराण इतिहासको उन्होंने ब्राह्मणभागसे भिन्न माना है। देखिये—

"तदप्रामाण्यमनृतव्याघातपुनरुक्तेभ्यः" (न्यायदर्शन २।१।५७) इस सूत्रसे श्री गौतमजीने वेद प्रामाण्यको दृढ़ करनेके लिये स्थूणानिखनन न्यायसे (खम्भेको मजबूतीसे गाड़नेके लिये उसे पत्थर आदि से ठोंकना पड़ता है) शङ्का की है। यहाँ पर अनृत, व्याघात, पुनरुक्त तीन दोष वेद पर लगाये गये हैं। यहाँ पर उनके उद्धरण ब्राह्मणभागसे दिये गये हैं, देखिये—'पुत्रकामः पुत्रेष्ट्या यजेत'। 'उदिते होतव्यम् (ऐतरेय ब्रा० ५।५ २६) 'श्यावोऽस्याहुतिमभ्यवहरति य उदिते जुहोति'। 'त्रिः प्रथमामन्वाह त्रिरुत्तमाम्' (ऐत० १।३।१३, शतपथ० ११।२।१।४, गोपथ० २।३।११) यह तीनों ही प्रमाण ब्राह्मणभाग के हैं।

जो लोग ब्राह्मणभागकी वेदशब्दवाच्यता उसकी स्तुतिके लिये मानते हैं; वे यहाँ पर अवश्य दृष्टि डालें। यदि केवल प्रशंसाके लिये ब्राह्मणभाग को वेद माना जाता; तब जहाँ पर वेदप्रमाणकी आवश्यकता है, वहाँ पर ब्राह्मणभागका प्रमाण सर्वथा न दिया जाता। परन्तु प्राचीन लोग जब वेदके प्रमाणके अवसर पर ब्राह्मणभागका प्रमाण देते हैं; तब उससे स्पष्ट है कि ब्राह्मणभाग वास्तविक ही वेद है, अर्थवाद से नहीं। नहीं तो यह भला कहाँका न्याय हो सकता है कि—खण्डन करना हो वेद का, वा महिमा दिखानी हो वेद की; और उसमें प्रमाण दिया जावे ब्राह्मणभाग का। इससे स्पष्ट है कि—ब्राह्मणभाग वेद है। अर्थवाद या स्तुतिकी कल्पना तो वादियोंका अपनी पक्षरक्षाके लिये व्याजमात्र ही है। नहीं तो कोई मन्त्रभागके परमेश्वर प्रणयनमें स्तुतिवादकी कल्पना कर डाले; तब क्या वादी वैसा मान लेंगे।

यदि भाष्यकार वात्स्यायनमुनि ब्राह्मणभागको वेद न मानते; तो यह कहाँ का न्याय था कि—वेद का खण्डन करनेके लिये उद्धरण ब्राह्मणभागका दिया जाता। इससे स्पष्ट है कि—श्री वात्स्यायन ब्राह्मणभागको मन्त्रभाग ही की भांति वेद मानते हैं। केवल वात्स्यायन नहीं; प्रत्युत सूत्रकार श्रीगौतमजी का भी यही पक्ष है। तभी तो उन्होंने पुत्रेष्टिकी अनृतताके उत्तरमें "न कर्मकर्तृसाधनवैगुण्यात्" (२।१।५८) यह सूत्र बनाया। "उदिते होतव्यम्" इत्यादि व्याघातके उत्तरमें "अभ्युपेत्य कालभेदे दोषवचनात्" (२।१।५९) यह सूत्र बनाया। 'त्रिः प्रथमामन्वाह' इस पुनरुक्तके उत्तरमें 'अनुवादोपपत्तेश्च' (२।१।६०) यह सूत्र बनाया। तो जब सूत्रकार वा भाष्यकार दोनों ही ब्राह्मणभागको वेद मानते हैं; तब स्वामीजी उनका विपरीत मत कैसे दिखा सकते हैं।

बल्कि भाष्यकार श्री वात्स्यायन मन्त्रभाग एवं ब्राह्मणभागको समकक्ष (बराबर दर्जेके) मानते हैं, और पुराणेतिहासको ब्राह्मणभागसे भिन्न मानते हैं। देखिये उनका स्पष्ट प्रमाण— "विषयव्यवस्थापनाच्च यथाविषयं प्रामाण्यम्। अन्यो मन्त्र-ब्राह्मणस्य विषयः, अन्यश्च इतिहासपुराणधर्मशास्त्राणाम्' (४।१।६२) देखिये स्वामीजी! श्री वात्स्यायन तो ब्राह्मण-

भागका विषय अन्य मानते हैं और पुराण इतिहास का विषय अन्य। मन्त्रभाग एवं ब्राह्मणभागके विषयको वे बराबर मानते हैं। अपने-अपने विषय में मन्त्रभाग, ब्राह्मणभाग, पुराण इतिहास तथा धर्मशास्त्रको वे स्वतः प्रमाण मानते हैं। देखिये श्रीवात्स्यायनका स्पष्ट वचन —

'यज्ञो मन्त्र-ब्राह्मणस्य, लोकवृत्तमितिहासपुराणस्य, लोकव्यवहारव्यवस्थापनं धर्म्मशास्त्रस्य विषयः। तत्र एकेन न सर्वं व्यवस्थाप्यते-इति यथाविषयमेतानि प्रमाणानि इन्द्रियादिवदिति' (४।१।६२)

यहाँ पर श्रीवात्स्यायनने किस प्रकार स्पष्ट रूपसे मन्त्रभाग ब्राह्मणभागका समान विषय बताया है, इतिहास पुराणका उनसे भिन्न विषय बताया है। उन्होंने उस सूत्रके भाष्यमें यह भी कहा है — 'प्रमाणेन खलु ब्राह्मणेन इतिहासपुराणानां प्रामाण्यमभ्यनुज्ञायते'। यहाँ पर ब्राह्मणोंकी प्रमाणतासे इतिहास पुराणको प्रमाण बताया गया है। यदि ब्राह्मणभाग ही इतिहास पुराण होता; तो अपनेसे अपनी सिद्धि किस प्रकार कर सकता; चतुरसे चतुर भी पुरुष अपने कन्धे पर नहीं चढ़ सकता। ब्राह्मणभागसे ब्राह्मणभाग की प्रमाणता नहीं हो सकती; साक्षी और अभियुक्त समान नहीं हुआ करते। तब फिर ब्राह्मणभाग तथा पुराण इतिहास एक दूसरेसे भिन्न सिद्ध हुए।

इस प्रकार जब न्यायदर्शनके सूत्रकार एवं भाष्यकार ब्राह्मणभाग तथा पुराणेतिहासको एक दूसरेसे भिन्न मानते हैं; तब जोकि स्वा० द० जीने उनके सूत्र वा भाष्य उद्धृत किये हैं, उनका फल प्रयासमात्र ही है, क्योंकि उनमें स्वामीजीके अभीष्टका गन्ध ही नहीं, यह बात न्यायमर्मके जाननेवालोंसे छिपी नहीं। तब ब्राह्मणभाग स्पष्टतया वेद सिद्ध हुआ।

श्री तुलसीराम स्वामीने 'तदप्रामाण्यम्' इस न्यायदर्शनके सूत्रके विषयमें एक नई बात कही है। उन्होंने उक्त सूत्रमें 'शब्द-प्रामाण्याप्रामाण्य' विषय दिखा कर कहा है कि—"यहाँ पर शब्दका अर्थ है 'आप्तवचन'। आप्तवचन यहाँ पर ब्राह्मणभाग है; इसलिए ही श्रीगौतमजीने यहाँ पर ब्राह्मणभागके ही प्रामाण्यकी सिद्धि की है—यहाँ पर वेदकी कोई चर्चा नहीं;" यह छोटे स्वामीका अभिप्राय है; पर यह भी ठीक नहीं, क्योंकि उनके मतमें ब्राह्मणभाग परतः प्रमाण है; अतः यहाँ पर वेदकी ही प्रामाण्य-सिद्धि अपेक्षित है। नहीं तो फिर न्यायके मतमें आपके अनुसार ब्राह्मणभाग ही 'शब्द' रहेगा, मन्त्रभाग नहीं। वास्तवमें न्यायसूत्रकारने वेदको ही शब्द माना है; यह बात बड़े स्वामी स्वा० दयानन्दजीको भी अभीष्ट है। उन्होंने सत्यार्थप्रकाशके तृतीयसमुल्लासके ३३ पृष्ठमें 'आप्तोपदेशः शब्दः' (१।१।७) इस न्यायसूत्रकी व्याख्या करते हुए लिखा है — पूर्ण आप्त परमेश्वरके उपदेश वेद हैं; उन्हीं (वेद) को शब्द प्रमाण जानो' इस प्रकार 'शब्द' से 'वेद' लिखा है। उसी शब्द (वेद) हीकी परीक्षा प्रकरणमें न्यायके पूर्व सूत्र हैं। वेदके मन्त्रभाग एवं ब्राह्मणभाग दो भाग होते हैं; अतः इन दोनोंमें एक भागके ग्रहण करने पर भी वेद प्रामण्य रूप न्यायके सिद्धान्तकी सिद्धि हो ही गई।

इसीलिये उक्त सूत्रकी वृत्तिमें भी 'दृष्टार्थक व्यतिरिक्त वेदकी अप्रमाणता' यही विषय दिखलाया गया है। इसलिये विश्वनाथ कृत वृत्तिमें भी उक्तसूत्रकी अवतरणिकामें कहा गया है — 'अदृष्टार्थक वेदस्य प्रामाण्यं परिक्षितुं पूर्वपक्षयति' तभी भाष्यकार वात्स्यायनने भी इसके उपसंहारमें 'वेद' शब्द लिया है, यह आगे कहा जायगा। इससे हमारा ही पक्ष सिद्ध हुआ। इसी प्रकार वेदान्तादि दर्शनोंमें 'शब्द' शब्दसे वा 'आगम' शब्दसे 'वेद' ही अभिप्रेत होता है। वेदके दो भाग होनेसे उनमें मन्त्रभाग वा ब्राह्मणभाग एक भागका प्रमाण दे दिया जाता है, क्योंकि दोनों भाग समान रूपसे प्रमाण हैं।

जोकि 'भास्करप्रकाश' में श्री तुलसीराम स्वामीने कहा है कि—"यहाँ शब्द-प्रमाणकी परीक्षा आरम्भ हुई है और शब्द प्रमाणान्तर्गत वेद, स्मृति आदि समस्त आप्तोक्त सत्य शास्त्र हैं, न केवल वेद ही

शब्द प्रमाण हैं, इससे गौतम-सूत्रोंके उदाहरणोंमें ब्राह्मण वाक्यके उदाहरणसे क्या हानि है" यह कह कर छोटे स्वामीने अपनी दुर्बलताका परिचय दिया है। वास्तवमें परीक्षा मूल वस्तुकी हुआ करती है, क्योंकि अन्य ग्रन्थोंकी मान्यता तो वेदानुकूलतासे स्वयं ही हो सकती है; तब उनकी परीक्षाका अवसर ही क्या था? अन्यथा वहीं स्मृतिका भी कहीं वर्णन श्रीगौतम वा वात्स्यायनको करना चाहिये था; परन्तु नहीं किया गया, इससे स्पष्ट है कि—सूत्रकार वा भाष्यकारको यहाँ 'शब्द' पदसे वेद ही अभीष्ट है। उसीकी प्रमाणतासे अन्य ग्रन्थोंकी तदनुकूलतामें स्वयं ही मान्यता हो जायगी। इस कारण यहाँ पर वेद परीक्षा ही है। 'गौणमुख्ययोर्मुख्ये कार्यसम्प्रत्ययः' यह न्याय भी प्रसिद्ध है। विशिष्ट निराकरण तो पहले किया ही जा चुका है। इसी लिए स्वयं श्री तुलसीराम स्वामीने अपने 'वेदप्रकाश' पत्रके अप्रैल सन् १६१५ की संख्याके ८९ पृष्ठमें 'वेदोंका महत्त्व' शीर्षक देकर लिखा है—"न्यायशास्त्रके आचार्य गौतम मुनि जो आन्वीक्षिकी तर्कविद्याके आचार्य थे, उन्होंने वेदों पर आई वा आनेवाली तीन शङ्काओंका प्रौढ़तासे निवारण किया, उन्होंने पूर्व पक्ष करके सन्देह उठाये कि—"तदप्रामाण्यमनृतव्याघातपुनरुक्तेभ्यः इत्यादि।" इसके आगे श्री तुलसीरामजीने तीन उत्तर सूत्र लिख कर वात्स्यायनभाष्यके ढङ्गसे समाधान किया है। इस प्रकार उन्होंने स्वयं ही अपने मतका खण्डन तथा हमारे पक्षका मण्डन कर दिया। स्वा० दयानन्दजीको तो यहाँ पर 'शब्द' से 'वेद' अभीष्ट है, यह हम पहले दिखा ही चुके हैं। उसी 'शब्द' की परीक्षाका यहाँ पर प्रकरण है।

परन्तु जोकि स्वा० द० जीने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिकाके ८४ पृष्ठमें 'प्रमाणं शब्दो यथा लोके विभागश्च ब्राह्मणवाक्यानां त्रिविधः' इस वात्स्यायनभाष्यको उद्धृत करके उसके आगे लिखा है—'अयमभिप्रायः ब्राह्मणग्रन्थशब्दा लौकिका एव न वैदिकाः'। परन्तु ज्ञात नहीं होता कि—यहाँ पर स्वामीजी धोखेमें पड़ गये वा भूल गये; क्योंकि—'प्रमाणं शब्दो यथा लोके' यहाँ तक तो २।१।६० न्याय सूत्रका भाष्य समाप्त हो गया। आगे 'विभागश्च ब्राह्मणवाक्यानां त्रिविधः' यह पाठ तो २।१।६१ न्यायसूत्रकी अवतरणिका है। ज्ञात नहीं; स्वामीजीने इन भिन्न वाक्योंको इकट्ठा क्योंकर कर दिया? तब उनसे प्रदर्शित किया हुआ अभिप्राय भी निर्मूल सिद्ध हुआ।

यहाँ पर स्वामीजीने ब्राह्मणभागको लौकिककी भांति दिखलाकर उसे वेदसे भिन्न सिद्ध करना चाहा है; पर यह उनका अभिप्राय सफल नहीं हो सकता। यदि लोकका दृष्टान्त देकर मन्त्रभागकी पुष्टि कर दी जावे; तब क्या स्वामीजीके अनुसार मन्त्रभाग भी लौकिक हो जावेगा? देखिये न्यायदर्शनका वात्स्यायनभाष्य — 'न भिद्यते लौकिकाद् वाक्याद् वैदिकं वाक्यं प्रेक्षापूर्वकारिपुरुषप्रणीतत्वेन' (४।१।६०) यहाँ पर वैदिक वाक्यको लौकिकवाक्यके समान दिखलाया गया है; तब क्या स्वामीजी वेदको भी लौकिक मान लेंगे?। यास्कमुनिने निरुक्तमें १।१६।१-४-७-६ कौत्समतके खण्डनके अवसर पर जहाँ मन्त्रभागकी सार्थकता सिद्ध की है, वहाँ पर सभी लौकिक दृष्टान्त दिये हैं। तब क्या स्वामीजी अपने कथनानुसार मन्त्रभाग—अपने वेदको लौकिक अथवा वेदभिन्न मानेंगे? इसका उत्तरदायित्व हम विद्वान् पाठकों पर छोड़ते हैं। यदि ब्राह्मणभाग लौकिक होता वेद न होता; तो उसमें वैदिक कार्य न होते। परन्तु हुआ करते हैं—यह हम पूर्व दिखला चुके हैं; तब ब्राह्मणभाग लौकिक न हुआ, किन्तु वेद ही हुआ।

अब पाठक 'प्रमाणं शब्दो यथा लोके' इस पूर्व लिखित वात्स्यायनभाष्यका अर्थ देखें — जिसमें स्वामीजी भ्रान्तिमें पड़ गये। शब्दः — वेद, प्रमाणम् प्रमाण है, यथा लोके—जैसे लौकिक वाक्य प्रमाण हुआ करता है। (यही बात निरुक्तमें श्रीयास्कने कही है — 'अर्थवन्तः शब्दसामान्यात्' १।१६।१ यहाँ पर दुर्गाचार्यने यों भाष्य किया है — ये एव गोशब्दो लोके स्वरसंस्कारयुक्तः, स एव मन्त्रेष्वपि'। इसके आगे श्रीवात्स्यायनने अग्रिम सूत्रकी अवतरणिका दी है

कि — 'ब्राह्मण-भागके वाक्य तीन प्रकारके होते हैं'। इससे ब्राह्मणभाग 'शब्द' (वेद) सिद्ध हुआ। 'प्रमाणं शब्दो यथा लोके' यहाँ पर 'यथा' शब्द उपमावाचक है। उपमा होती है — भिन्न वस्तुओंके साधर्म्य दिखलाने पर। 'चन्द्रके समान मुख है' यहाँ पर उपमान चन्द्रमा, उपमेय मुख दोनों भिन्न भिन्न हैं, एक नहीं। इसी लिए ही काव्यप्रकाशके दशम उल्लास में उपमाका लक्षण दिखलाते हुए कहा गया है — 'साधर्म्यमुपमा भेदे'। तब लौकिककी उपमासे ब्राह्मण-भाग लोकसे भिन्न सिद्ध हुआ; नहीं तो वेदका प्रकरण चल रहे होने पर ब्राह्मणभागका वर्णन अप्रकृत होता। अतः स्वा० द० का इष्ट अर्थ यहाँ पर नहीं।

'विध्यर्थवादानुवादवचनविनियोगात् (२।१।६२) इस न्यायदर्शनके सूत्रमें श्रीगौतमजीने ब्राह्मणभागके तीन भेद दिखलाए। फिर क्रमसे 'विधिर्विधायकः' (२।१।६३) स्तुतिर्निन्दा परकृतिः पुराकल्प इत्यर्थवादः' (२।१।६४) 'विधिविहितस्यानुवचनमनुवादः' (२।१।६५) इन सूत्रोंमें उक्त तीनों भेदोंके लक्षण कहे। भाष्यमें विधि आदियों के 'अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः' 'सर्वजितो वै देवाः सर्वमजयन्' 'एतेन अनिष्ट्वा अन्येन यजते गर्ते पतति' इत्यादि उदाहरण दिये गये।

पश्चात् ६५ सूत्रके भाष्य में श्रीवात्स्यायनने इन ब्राह्मणवाक्योंकी सार्थकताके लिए निम्न लौकिक उदाहरण दिए—'लोकेपि च विधिरर्थवादोऽनुवाद इति च त्रिविधं वाक्यम्। 'ओदनं पचेत्' इति विधिः। 'आयुर्वर्चो बलं सुखंप्रतिभानञ्च अन्नं प्रतिष्ठितम्' इति अर्थवादः। 'पचतु पचतु भवान्' इत्यभ्यास इत्यनुवादः' इस प्रकार लौकिक वाक्योंका उदाहरण देकर श्रीवात्स्यायन आगे 'अग्निहोत्रं जुहुयात्' इत्यादि ब्राह्मणभागके वाक्योंको घटाते हैं — 'यथा लौकिके वाक्ये [ओदनं पचेत् इत्यादिके] विभागेन अर्थग्रहणात् प्रमाणत्वम्, एवं वेदवाक्यानामपि ['अग्निहोत्रं जुहुयात्' इत्यादि पूर्वोक्त ब्राह्मणवाक्यानां] विभागेन अर्थग्रहणात् प्रमाणत्वं-भवितुमर्हति २।१।६५।

यहाँ पर कितनी स्पष्टता की गई है। उक्त स्थलमें जितने लौकिक वाक्य भाष्यकार वात्स्यायनने उदाहृत किये हैं, उनमें ब्राह्मणभागका एक भी वाक्य नहीं; और वेदवाक्य उसने जितने उद्धृत किये हैं वे ब्राह्मणभागके ही हैं, मन्त्रभागका उनमें एक भी उद्धरण नहीं। उसी ब्राह्मण-भाग प्रकरणमें 'एवं वेदवाक्यानामपि बिभागेन अर्थ-ग्रहणात् प्रमाणत्वं भवितुमर्हति' इत्यादि रूपमें वेद नामसे उपसंहार होनेसे इधर उपक्रम उपसंहारकी एकताके प्रसिद्ध होनेसे, न्यायसूत्रकार एवं भाष्यकार दोनोंके ही मतसे वे वेदवाक्य सिद्ध हुए। तब उनके मतानुसार ब्राह्मणभाग स्पष्ट वेद सिद्ध हुआ।

स्वा० दयानन्दजीने न्यायदर्शनके जो सूत्रभाष्य उद्धृत किये हैं; उससे उनका अभीष्ट सिद्धान्त सिद्ध नहीं होता; यह हम डंकेकी चोट कहते हैं। विद्वान् पाठक स्वयं ऋग्वेदादिभाष्यभूमिकाके ८४।८५ पृष्ठ देखें। लौकिक उदाहरणोंके द्वारा ब्राह्मणभागको सिद्ध करने से यदि ब्राह्मणभागको कोई वेदभिन्न माने; तो उसे दूरसे ही नमस्कार करना चाहिये; नहीं तो निरुक्तमें लौकिक उदाहरण देकर जो कि मन्त्रभागको प्रमाण सिद्ध किया गया है; तब मन्त्रभाग भी वेदभिन्न हो जाएगा; यह हम पहले कह चुके हैं। इसी प्रकार 'मन्त्रायुर्वेदप्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यम्' (२।१।६८) इस न्यायदर्शनके सूत्रसे लौकिक आयुर्वेदके दृष्टान्तसे वेद का प्रामाण्य सिद्ध किया गया है; तब वादियोंके अनुसार क्या वेद, वेदभिन्न हो जाएगा ?। अथ च ब्राह्मणभागको वेद न मानने पर वेदप्रकरणमें ब्राह्मण-भागका वर्णन अप्रकृत हो जाएगा, और ब्राह्मणभागके प्रकरणमें ६५ सूत्रमें — 'एवं वेदवाक्यानामपि प्रमाणत्वं भवितुमर्हति' यह उपसंहार भी अप्रकृत हो जायगा पर ऐसी बात नहीं है; तब न्यायदर्शनके मतमें ब्राह्मणभाग भी वेद सिद्ध हुआ।

[क्रमशः]

होली पर हमारा कर्तव्य

[लेखक—विद्यालङ्कार श्री पं० रामेश्वरजी शास्त्री, साहित्याचार्य]

['श्रीस्वाध्याय' के प्रथमवर्षके हेमन्ताङ्कमें हम अपने 'राष्ट्रियपर्व होली' शीर्षक सुविस्तृत लेखमें होलीका राष्ट्रिय रूप बता चुके हैं। होली चारों वर्णोंका सामूहिक पर्व है। इसके द्वारा हमें संगठित होने और अन्यायीके विरुद्ध निस्संकोच हो कर दृढ़तासे अन्यायका प्रतिरोध करनेकी समुचित शिक्षा मिलती है। होली हमारा धार्मिक राजनैतिक एवं ऐतिहासिक प्रधान पर्व है। इसकी उत्पत्ति अन्यायी राजा और न्यायप्रिय धार्मिक प्रजाके संग्रामसे हुई है, इस बात को सदा स्मरण रखना चाहिए। इस अङ्कमें हम लक्ष्मणगढ़ निवासी विद्वद्वर श्री पं० रामेश्वरजी शास्त्री साहित्याचार्य का यह लेख प्रस्तुत कर रहे हैं। विद्वान् लेखकने होली पर जिन ७ कर्तव्योंका उल्लेख किया है उनकी ओर हम पाठकों का ध्यान विशेष रूपसे आकर्षित करना चाहते हैं। —सम्पादक]

प्रायः आजकलके गवेषकोंने "होली" को शूद्रोंका त्यौहार माना है, पर अधिकाधिक अनुसन्धान करने पर भी हम इस तथ्य पर नहीं पहुँचे हैं कि इस वर्गीकरणका क्या कारण है। क्या 'होली' के उत्सवमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य सम्मिलित नहीं होते हैं? इस उत्सवके आने पर शूद्रोंके हृदयमें जो उल्लास उत्पन्न होता है, क्या वह द्विजातियोंके हृदयसे दूर हो जाता है? किन्तु नहीं, देखा गया है कि जितनी प्रसन्नता उनको होती है, उससे भी अधिक द्विजातियोंको होती है, इसलिये इसको चारों जातियों का परम प्रिय पर्व (त्यौहार) कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं है। प्राक्तन अन्वेषणासे तो यही सिद्ध होता है कि यह द्विजातियोंका प्रधान पर्व था, न कि शूद्रोंका। क्योंकि जिस दिन आजकल होली मनाई जाती है उसी दिन (पूर्णिमा) को पहिले हमारे यहाँ 'नवान्नेष्टि' 'नवसस्यान्नेष्टि' नामक यज्ञ हुआ करता था। जब तक कि यह यज्ञ नहीं हो जाता था तब तक शर्दीमें होने वाले जौ गेहूँ और चणे खानेके काममें नहीं लाये जाते थे। जैसा कि 'मानवगृह्य-सूत्र' में लिखा है कि — "नानिष्ट्वाग्रायणेन नवसस्य-मश्नीयात्। पर्वण्याग्रायणम् चरेत्। फाल्गुन्याः पौर्ण-मास्याम् पुरस्ताद्धानापूपाभ्याम् भगं चार्यमणं च यजेत।" कुछ दिनोंके अनन्तर उस यज्ञमें जहाँ-यवोंकी आहुतियाँ दी जाती थी वहाँ होलोंकी (पके हुए चणे) जिन्हें अबतक मारवाड़में 'होला' कहते हैं, उनकी आहुतियाँ दी जाने लगीं, जिससे उस यज्ञका ही नाम 'होला' हो गया। जैसा कि शब्द कल्पद्रुममें लिखा है— 'तृणाग्निभ्रष्टार्धपक्वशमीधान्यं होलकः, तदा-हुति दानादेव 'होली' ति निगद्यते।'

इस बातसे यह स्पष्टतया प्रतिभासित होता है कि आजकलकी 'होली' उसी यज्ञकी प्रतिकृति (नकल) है। यज्ञमें भी उपले, समिधा, और धान्यकणोंका प्रक्षेप होता था, आजकी होलीमें भी उपलोंकी बनाई हुई माला समिधाके स्थानमें खांडे, जो अबतक भी शमी "जो अष्टविधसमिधाओंमें एक है" बनवाकर डाले जाते हैं इतना ही नहीं, मारवाड़की होली दाहके समय देखा गया है, चणे और जौ, गेहूँकी दक्षियाँ अबतक होलीकी आगमें भूनी जाती हैं। इस बातको देखनेसे कोई सन्देह नहीं रहता कि यह 'होली' उसी यज्ञका रूप नहीं है।

अब विचारना यह है कि यज्ञ करनेका अधिकार किन जातियोंको धर्म-शास्त्रकारोंने दिया है। जब उन अधिकारोंकी ओर दृष्टि डालते हैं तब 'अध्यापन-मध्ययनम् यजनं याजनं तथा, दानं प्रतिग्रहश्चैव' इन मनुवर्णित षड्विधकर्मोंमें यज्ञ करानेका अधिकार

ब्राह्मण जातिका ही ज्ञात होता है, उसके साथ-साथ क्षत्रिय और वैश्योंका यजमान रूपेण यज्ञ करानेमें हाथ रहता है, शूद्र केवल सेवा वृत्तिसे वहाँ उपस्थित हो सकते हैं। अतएव अधिकारानुगुण्यसे 'हाली' महायज्ञ करने करानेकी अधिकारिणी द्विजाती ही सिद्ध होती है, शूद्र परिचर्याकारक होनेसे उस यज्ञ की सिद्धि करनेमें सहायक मान लिए गए हैं। इससे यह विशेषतः द्विजातियोंका, सहायकतया शूद्रोंका, सम्मिलित रूपसे चारों वर्णोंका ही परम प्रिय पर्व है, यह मानना चाहिए।

कई भाई यहाँ यह कह सकते हैं कि इस यज्ञमें धान्यका हवन होता है, धान्यके उत्पादक किसान लोग हैं और किसानोंमें शूद्र जातिके ही लोग अधिक हैं इसलिए यह शूद्रोंका ही त्यौहार है। परन्तु ऐसा कहनेवाले भूल जाते हैं कि "कृषि गौरक्ष्य वाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्" इस गीतोक्त कर्म-व्यवस्थाके अनुसार खेती करना वैश्यका ही प्रधान कर्म है, वैश्य जाति द्विजातियोंमेंसे एक है, इसलिए होलीको चारों वर्णोंका धार्मिक एवं राष्ट्रिय पर्वके सिद्ध करनेमें कोई विप्रतिपत्ति नहीं है।

होलीको एक यज्ञका रूप मानने के अतिरिक्त होलीके विषयमें यह बात सर्वविदित है कि यह होली भगवान्‌के परम प्रिय भक्त प्रह्लादकी स्मृतिमें मनाई जाती है। जब कि पह्लादको निशाचर-राज हिरण्यकशिपु उपायान्तरोंसे नष्ट न कर सके तब उन्होंने अपनी भगिनी ढुंढाको आगमें बैठ कर प्रह्लादको जलानेका आदेश दिया था, क्योंकि ढुंढाको यह वरदान था कि वह अग्निमें प्रवेश करके भी नहीं जल सकती थी, इसी विश्वासके आधार पर हिरण्यकशिपुने ऐसा करनेका सम्भवतः इसी फाल्गुन पूर्णिमाको आदेश दिया था। वह अपने भाईकी आज्ञा मान कर प्रह्लादको गोदीमें लेकर जलानेके अभिप्रायसे अग्निमें बैठी थी 'किन्तु'

"जाको राखे साँइयाँ मारि सकै नहि कोय।
बालन बांका कर सकै जो जग वैरी होय॥"

इस सूक्तिके अनुसार वह स्वयं ही अग्निसात् हो गई और भक्तवर प्रह्लाद बच आए, इसी हर्षमें भारतमें यह त्यौहार मनाया जाता है। आज भी होली जलाते समय एक लकड़ीके खम्भेको प्रह्लाद समझ कर उबारा जाता है, और होली दाहको उस राक्षसीके मृत्युका शुभ चिन्ह समझा जाता है। मारवाड़में उस "ढूंढा" राक्षसीके नाम पर बच्चोंकी रक्षाके लिए 'ढूंढ' पूजनेकी प्रथा भी प्रचलित है। इससे इस त्यौहारका उपर्युक्त कथानकसे सम्बन्ध होना बहुत अंशोंमें सत्य माना जाता है। परन्तु इस कथानकको देखनेसे भी होलीको शूद्रोंका त्यौहार मानना युक्तियुक्त नहीं हो सकता है। क्योंकि न तो प्रह्लाद शूद्र वंशमें उत्पन्न हुए थे, और न वे शूद्रोंके कोई उपास्य देव ही हैं। किन्तु वे देवताओंके उत्पादक कश्यप महर्षिके वंशजोंमें थे, और श्रीमन्नारायणके परम भक्त थे, इसलिए परम भागवतोंकी गणनामें इनके नामका प्रथमोल्लेख किया गया है।

प्रह्लादनारदपराशरपुण्डरीक
व्यासाम्बरीषशुकशौनकभीष्मदाल्भ्यान्।
रुक्माङ्गदार्जुनवशिष्ठविभीषणादीन्
पुण्यानिमान्परमभागवतान् स्मरामि॥

अतः सिद्ध होता है कि यह भगवद्भक्तकी स्मृतिमें मनाया जानेवाला पर्व सभी जातियोंका है, न कि किसी जाति विशेषका।

ऊपरके अवतरणोंसे 'होली' का सम्बन्ध यज्ञ और प्रह्लाद कथानकसे बतलाया गया है, इसलिये इसमें इस प्रकार कार्य होने चाहिये जिससे जिस बातको लेकर यह उत्सव प्रवृत्त हुआ था, उस उद्देश्यकी पूर्णतया पूर्ति हो। किन्तु देखा गया है कि 'होली' जैसे महायज्ञको करने वाले, अथवा परम भागवत प्रह्लादजीकी स्मृति मनानेवाले हमारे कई भाई इन दिनोंमें गन्दे और फोश शब्द बका करते हैं, रस्ते चलती भले घरोंकी स्त्रियोंको छेड़ा करते हैं, परस्परमें बेहूदा मजाक किया करते हैं, गन्दी नालीके

पानीको और कीचड़को लोगोंपर फेंका करते हैं, भांग आदि मादक द्रव्योंका सेवन किया करते हैं।

परन्तु यह सब करना उत्सवके महत्त्वको घटाना है, और अपनी सुबुद्धि एवं सभ्यताको अपने पैरोंसे जान बूझ कर कुचलना है। इसलिए इस त्यौहारके उद्देश्यको देखकर यदि कार्य-कलापकी रचना की जाय तो यह उत्सव सर्वप्रिय और अत्यन्त लाभप्रद हो सकता है, हमारी समझमें इसके सुधारके लिए ये बातें होनी चाहिएं —

(१) गन्दे गानों और गालियोंके स्थानमें भगवान्के भक्तिरसमें सने हुए भजन, धर्म और देश सेवाकी भावनाको जागृत करनेवाले गानोंका प्रचार होना चाहिए।

(२) यज्ञकी महत्ता आवश्यकता और प्रह्लादकी विशुद्ध कथा तथा व्याख्यान होने चाहिए एवं कीर्तनकी व्यवस्था होनी चाहिए।

(३) वसन्तका समय होनेके कारण कई प्रकारके सभ्यतापूर्ण खेल खेलने चाहिएं, लड़कोंको प्रोत्साहित करके व्यायामका महत्त्व सिखलाना चाहिए।

(४) फाग खेलना बुरा नहीं है, किन्तु विशुद्ध पानीमें रङ्ग आदि डाले बिना अपने समवयस्कोंके साथ ही उनकी इच्छासे खेलना चाहिए, किसी राह चलते आदमी पर, और पूज्या चाची और भावजोंमें रङ्ग डालना अच्छा नहीं है।

(५) किसीका मुँह काला करना और गधे पर चढ़ाना अतिनिन्दनीय काम है, मुंह रङ्गनेके लिए गुलाल काममें लाई जा सकती है, कई प्रकारके जुलूस निकाले जा सकते हैं, जिनसे जनतामें धार्मिक एवं राष्ट्रिय भावोंकी वृद्धि हो।

(६) गायन और नृत्यकलाके विकासके लिए सुरुचिपूर्ण गायनोंका प्रचार होना चाहिए। यदि ऐसे अवसर पर 'राधेश्याम कविरत्न' रचित 'परम-भक्त प्रह्लाद' नाटकका अभिनय जनताको दिखलाया जाय तो अत्यन्त उपयुक्त है।

(७) मादक द्रव्योंका पूर्ण बहिष्कार होना चाहिए।

यदि सुधार प्रिय नवयुवकवृन्द और धार्मिक-संस्थाओंके प्रचारकवर्ग एवं धर्म-मर्म ज्ञाता विद्वान् लोग इस उत्सवपर उपर्युक्त बातोंका जनताके अन्दर प्रचार कर दें और जहाँ-तहाँ कार्य रूपमें परिणत करानेका बीड़ा उठा लें तो थोड़े ही दिनोंमें हम लोग भगवद्भक्त प्रह्लादकी (जिनकी कि स्मृतिमें यह उत्सव मनाया जाता है) अन्तस्तल स्पर्शिनी निम्नांकित आन्तरिक अभिलाषाकी पूर्ति कर सकते हैं, जिसका कि करना हमारे लिए अत्यावश्यक है —

कस्यचित् किमपि नो हरणीयम्।
मर्मवाक्यमपि नोच्चरणीयम्।
लीलया भवनिधिं तरणीयम्।
श्रीपतेः पादयुगं स्मरणीयम्।
चित्तमेतदमली करणीयम्।

आशा है आर्य हिन्दू जनता होलीके उत्सवकी उपादेयता समझकर उसकी वास्तविकताकी रक्षाके लिए प्रह्लादकी सूक्तिको हृदयङ्गम कर कार्य रूपमें परिणत करेगी।

प्रभुसे !

[क०—श्री सम्पूर्णदत्तजी मिश्र]

कहा धारि लियौ धरि ध्यान धरातल, कालकी ज्वालमें रहने दो।
कहा सोचि लई भव-भारतके, दुखिया जनको दुख सहने दो।
धंसि जाँय रसातलमें हू कहाँ, सरिता सुखकी अब बहने दो।
प्रभो ! मस्तक मस्त विदेशिनके, चरणों तल निम्न न रहने दो ॥१॥

चरणामृतकी वैज्ञानिक महत्ता

[लेखक—श्री पं० विपिनचन्द्र जी जोशी]

प्रायः सभी प्रतिमापूजक आस्तिक हिन्दू चरणामृतको जानते और कुछ अश तक उसके गुण एवं प्रभावसे भी परिचित होते हैं। परन्तु समयके प्रभावसे आजकल अधिकांश लोग इन बातोंसे अनभिज्ञ हैं; हिन्दुओंके धार्मिक कृत्योंकी यत्रतत्र अवहेलना की जाती है, लोगोंको यह विदित नहीं है कि इनमें क्या वैज्ञानिक चमत्कार भरा हुआ है।

जो लोग याथार्थ्यविद् हैं और प्रत्येक बात पर सूक्ष्म रूपसे विचार करते हैं वे हिन्दुओंके प्रत्येक धार्मिक सिद्धान्त तथा कृत्यमें कुछ-न-कुछ विशेषता एवं तथ्य पाते हैं, उन्हें मानवजातिकी कल्याणकामनासे ओतप्रोत देखते हैं और इसे अनुभव करते हैं कि जिन पूज्यपाद महर्षियोंने इन बातोंको अन्वेषण करके उन्हें हिन्दूधर्ममें रखा है, वे प्राणिमात्रके हितको खूब समझते थे। सौभाग्यवश कतिपय पाश्चात्त्य विद्वानोंने इस बातको समझा है, उन्हें हिन्दूधर्म जैसा कि समझा जाता है ढकोसला नहीं प्रतीत होता, वे वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा हमारे पूर्वजोंकी असीम बुद्धिमत्ता पर विस्मित होते हैं। सूक्ष्मरूपसे देखने पर चरणामृत भी पूज्यपाद महर्षियोंकी बुद्धिमत्ताका परिचायक प्रतीत होता है। यह एक अमूल्य औषधि है। प्रश्न उठता है कि क्या उन महर्षियोंको अन्य औषधियाँ ज्ञात नहीं थीं? उत्तरमें यही कहना पड़ता है कि आयुर्वेद (जो तत्कालीन शिक्षाका प्रधान अङ्ग समझा जाता था) में वे पारङ्गत थे परन्तु उन्हें सर्वसाधारणके हितका ध्यान था, इसीलिये इस औषधिकी खोज और नित्य प्रति इसे प्राप्त कर सकनेकी व्यवस्था की गई।

इस महौषधिकी प्राप्ति कहाँ और कैसे हो सकती है, इसका भी खास प्रबन्ध है—हमारे देवालयोंमें सबको यह औषधि मुफ्त मिला करती है। इसके गुणोंको समझनेके लिए इसे तैयार करनेकी विधि पर ध्यान देना चाहिये। यह ताम्रपात्रमें रखी हुई शालग्राम शिलाका मन्त्रोपचारसे शुद्ध किया गया तुलसीदल, केशर, कस्तूरी आदिक पदार्थोंसे मिलाया गया जल है, अब देखना चाहिये कि शालग्राम क्या वस्तु है? यह गण्डकी नदीमें पाया जाने वाला पत्थर विशेष है। जिसमें स्वभावतः छोटे-छोटे कांचन कण होते हैं। ताम्बेका प्रभाव तो विज्ञानकी कृपा से सभीको विदित ही है—इसमें रखा हुआ जल वैसे ही रोगनाशक समझा जाता है, फिर विशेष विधिसे तैयार किये हुये जलका तो कहना ही क्या? तुलसीदलमें भी अनेक व्याधियोंको नष्ट करनेकी सामर्थ्य है, मलेरियाके कीटाणुओंको नष्ट करनेकी इसकी अपूर्व शक्ति तथा अन्य पौदोंसे विभिन्न दिन रात्रिमें प्राणवायु (Oxygen) को ही बाहर निकालनेकी असाधारण सामर्थ्य तो अर्वाचीन डाक्टरों द्वारा सिद्ध भी की जा चुकी है। रहे कस्तूरी और केशर। ये दोनों भी अच्छी औषधियों में माने जाते हैं। और कई रोगों में दिये जाते हैं, इस प्रकार चरणामृतके रूपमें हमें कस्तूरी, केशर, तुलसीदल तथा ताम्र भाजनमें रखे हुये कांचन कणोंका मन्त्रोपचारसे शुद्ध होकर अमृततुल्य वारि मिलता है। यह वारि स्वाभाविक रीतिसे बने हुए 'मकरध्वज' ऐसी महाऔषधि अवश्य ही व्याधि दूरीकरणकी सामर्थ्य रखता है। श्री विष्णु भगवान्का चरणोदक होनेसे यह समस्त आस्तिक हिन्दुओंको शिरोधार्य है। इस प्रकार नीचे का श्लोक चरणामृतमें पूर्णतया घटित होता है।

एक बात और है — चरणोदक एक बहुमूल्य एवं पुष्टिकर औषधि है, जिसके सेवनसे बल और पौरुष बुद्धि तथा आयु बढ़ती है। सर्वत्र समदर्शी

महर्षियोंने इसे मन्दिरोंमें तैयार कर वितरण करने की व्यवस्था इसलिये की कि सर्वसाधारण इसे प्राप्त कर सकें। इस प्रकार चरणामृत एक दिव्य-गुण सम्पन्न एवं वैज्ञानिक चमत्कारपूर्ण द्रव्य ठहरता है, जिसे तत्त्वान्वेषक ऋषियोंने हिन्दूमात्रके लिये सुलभ कर रखा है। इसके पानसे केवल शारीरिक लाभ ही नहीं होता, किन्तु आत्मिक उन्नति भी होती है। भक्ति और श्रद्धापूर्वक चरणोदक लेनेसे भगवद्दर्शन तथा परमधाम प्राप्ति जैसे कार्य भी सुलभ हो जाते हैं। इसी हेतु मृत्युके समय गंगाजल या चरणामृत पान करानेकी प्रथा प्रचलित है। उसका महात्म्य एवं गुण भी बतलाये जाते हैं।

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्।
विष्णोःपादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम्॥

जो मनुष्य नित्य नियमित रूपसे साढ़ेचार बजे जागकर शौच स्नानादिक नैत्यिक कर्मोंसे निवृत्त हो कर देवालयोंमें चरणोदक ग्रहण करने जाता है, उसे अकाल मृत्यु कहाँ ? प्रातःकालके भ्रमणके लाभ एवं प्रभावपूर्णतासे आजकलका शिक्षित-समुदाय भी परिचित प्रतीत होता है। परन्तु अभी उनमें न्यूनता है। क्योंकि इसमें अधिकांश घूमने वाले मुँह धोनेका भी कष्ट नहीं उठाते, कोई-कोई अवश्य मुँह धो लेते हैं। शौच स्नान एवं सन्ध्या-वन्दन प्रातःकालके भ्रमणमें मिलकर सोनेमें सुगन्ध का काम करते हैं। चरणामृत ग्रहण करनेमें हमें ये सभी बातें करनी पड़ती हैं। प्रातःकालके शान्ति-पूर्ण तथा स्वच्छ वायुमण्डलमें भगवान्की झाँकीका दर्शन हमारे हृदय में चिरस्थायी प्रभाव डालता है। हमें भक्तिकी ओर उन्मुख करता है। इस प्रकार शारीरिक उन्नतिके साथ-साथ चरणोदक हमारे आध्यात्मिक उत्कर्षका भी हेतु होता है।

सङ्कष्ट चतुर्थी

[ले०—श्री पं० चण्डिकाप्रसाद जी शर्मा बशिष्ठ, ज्यौतिषी]

संसारमें कष्टी एवं दुखी मनुष्योंके दुःख दूर करने में यह "माघ कृष्णा चतुर्थी" एक अपूर्व शक्ति रखती है। प्राचीन समयमें श्रीकृष्ण तनय 'अनिरुद्ध' का नागकन्या 'उषा' की दासी चित्ररेखाने हरण करके उषाके महलमें पहुँचाया, उस समय पुत्रशोकाकुल श्रीकृष्ण पत्नी रुक्मिणीने पुत्र प्राप्त्यर्थ यह "माघ कृष्णा चतुर्थी" व्रत किया, जिसके फलस्वरूप वधू सहित पुत्र आगमन हुआ। अस्तु, जनसाधारणको कष्टनाशनके लिए यह व्रत अवश्य करना चाहिये।

शुभ सन्देश

धर्मशास्त्रका कथन है कि मनुष्योंको शरीरका स्वास्थ्य 'नेत्रज्योति' बढ़ाने रोगादि नाश करने आयु बढ़ाने तथा शारीरिक सुख प्राप्त करने एवं स्वर्ग प्राप्ति धन सन्तान स्त्री सुखादिकी इच्छा रखनेवाले व मोक्षार्थीको भी 'पौष' मासमें 'धनुःके सूर्यमें' रोहिणी नक्षत्रमें सायङ्कालके समय शुद्ध जलसे शौच स्नान आदि करके खुले स्थानमें शयन करके श्रीचन्द्र-किरणका (एकाग्र चित्त व निराहार वा फलाहार स्वल्पाहार करके) पान करे। ऐसा करनेसे सुख और मोक्ष दोनोंकी प्राप्ति होती है। विज्ञ पाठक इससे लाभ प्राप्त करें। यदि अधिक समय न शयन किया जा सके तो कमसे कम २-४ घण्टे तो होना अवश्य चाहिये।

इस वर्ष यह समय पौष शुक्ला १३ बुधवार ता० २७ दिसम्बरका है।

(महाभारत अनुशासन पर्वसे)

दुर्गतिनाशिनी भगवती दुर्गा

[लेखक—विद्याभूषण श्री पं० मोहन शर्मा जी विशारद पूर्व सम्पादक 'मोहिनी']

ब्रह्म और माया-तत्त्वका निरूपण करते हुए मन्त्र-द्रष्टा ऋषियोंने स्थान-स्थान पर दोनोंके अन्योन्याश्रय सम्बन्धको प्रतिपादित किया है। मायाका स्वरूप दशमहाविद्याओंमें निश्चित करते हुये उन्होंने उसके दशावतारका भी विवेचन किया है। कतिपय सनातनी और शाक्त-सम्प्रदायी ग्रन्थोंमें इसके समर्थन की पर्याप्त सामग्री उपलब्ध होती है। उपर्युक्त दशावतारोंमें मातेश्वरी दुर्गाको आगतकालके कल्कि अवतारकी आख्या दी गई है। अतएव वर्त्तमान युगमें सिंहवाहिनी सर्वशक्तिदायिनी माता दुर्गाकी उपासना और पूजार्चा प्रत्यक्ष सिद्ध है। लौकिक और पारलौकिक सुगति तथा जीवनकी सफलताके लिये इस युगमें शक्ति-स्वरूपिणी, त्रिशूलधारिणी, माता दुर्गाके स्मरण, भजन और साधनके अतिरिक्त अन्य कोई सरल उपाय नहीं है। मातेश्वरी दुर्गाकी कृपा-भिक्षा प्राप्ति किस प्रकार सम्भव है और किसके पक्षमें सुलभ है, इसका ठीक-ठीक निर्णय तो साधक और विवेकी लोग ही दे सकते हैं। किन्तु, इस सम्बन्धमें ग्रन्थोंका मत क्या है और उनमें दुर्गा-तत्त्व पर क्या विवेचना की गयी है, यह विषय प्रयत्न-साध्य होनेसे पाठकोंके ज्ञान लाभार्थ यहाँ नीचे हम इसी पर विचार करते हैं। दुर्गाके चरणारविन्दोंमें अनन्य भक्तिभाव जाग्रत होने पर मनुष्यके जन्म-जन्मान्तरके पाप, ताप क्षय हो जाते हैं, वह आवागमनके कुचक्रसे सदैवके लिये मुक्त हो कर कैवल्यधामका वासी हो जाता है। पर इस श्रेष्ठ पदको प्राप्त करना कितना कठिन है, यह नीचे दिये श्लोक परसे भली भांति प्रकट है:—

"दुःखेन अष्टाङ्गयोग-सर्वकर्मोपासनारूपेण क्लेशेन गम्यते-प्राप्यते सा दुर्गा।"

"तां दुर्गां दुर्गमां देवीमिति देव्यथर्वशीर्षः।"

जिस महाशक्तिको अत्यन्त कष्ट पूर्ण तपश्चर्या द्वारा प्राप्त करना सम्भव है—वही महाशक्ति, माता दुर्गा हैं। जिससे बढ़कर दुर्लभ वस्तु इस अवनीतल पर और दूसरी कोई नहीं है, जिसकी सुप्राप्तिके लिये संसारकी समस्त प्रिय वस्तु और प्रिय जनों परसे आसक्तिको छुड़ा कर, मन, वचन, कार्यसे अपनेको उसके श्रीचरणोंमें समर्पित कर देना पड़ता है; जो अत्यन्त अगम तत्त्व-स्वरूपा प्रसिद्ध हैं; जो साधारण जीवोंके पक्षमें वाणी और मनसे अतीत हैं, उपासना रूपी नाना प्रकारके कष्ट, हृदयकी प्रबल व्याकुलता और आत्मावलम्बन आदि के बिना जिसको प्राप्त नहीं किया जा सकता, वही शक्ति-स्वरूपिणी दुर्गा देवी हैं। जगन्माता दुर्गाके पुण्यदर्शनोंके निमित्त साधकको अनेक कष्ट सहन करने पड़ते हैं। इसीलिये जगन्माताका कलिकालमें एक ही नाम दुर्गा है। योगीजन इसी आत्मरूपिणी माताके दर्शनार्थ अष्टाङ्ग-योगके साधनका क्लेश वहन करते हैं। भौतिकजगत्‌में जो वस्तु जितनी मूल्यवान् और दुर्लभ है, उस वस्तु को प्राप्त करनेके लिये जीवको उतना ही अधिक कष्ट सहन करना पड़ता है। करोड़ों मनुष्योंके बीचमें भाग्यवान् और लक्ष्मीवान् बिरले मनुष्य ही पाये जाते हैं। और जिनके गृहमें हीरक, रत्न, मणि माणिक्यादिका भण्डार होता है, उसके सञ्चयके लिये उन्हें नाना कठिनाइयों और दुःखों से मुठभेड़ करनी होती है। परन्तु, उनकी यह काम साधना दृश्य जगत्‌की थोथी वस्तुओंके लिये होनेसे उसकी उतनी सार्थकता नहीं है। यदि यही श्रम-साधना पार्थिव रत्नोंसे श्रेष्ठ, अविनश्वर-रत्न श्री दुर्गाजीकी प्राप्तिमें नियोजित कर दी जाए तो मानवका जन्म-जीवन सफल हो जाता है। क्योंकि

महारानी दुर्गा ही जगत्-माता हैं और पार्थिव तथा अपार्थिव धन-सम्पत्तिकी एकमात्र अधिष्ठात्री देवी हैं।

देवीजीके दुर्गादेवी होनेका एक प्राचीन इतिहास प्रसिद्ध है। सप्तशती-ग्रन्थमें आया है कि देवीके भावी अवतारोंमें एक दुर्गा अवतार भी होगा और तब वे दुर्गम नामक महा असुरका विनाश करेंगी। दुर्गम असुरका वध करनेके कारण ही उनका दुर्गा नाम होगा —

तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम्।
दुर्गादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ॥

देवीका स्वरूप जीव मात्रकी बुद्धिके लिये अगम्य है। वे यथार्थमें दुर्गेया और अगम्यस्वरूपा हैं और इसी कारण उन्हें माता दुर्गा कहा गया है। "दुर्गासि दुर्ग-भवसागर नौरसङ्गा।" के अनुसार वे जीवकी दुर्गति हरण करने वाली और भक्त जनोंकी दुर्गति हारिणी महा माया दुर्गा हैं। विपत्ति और महा सङ्कटकी दुर्जय घड़ियोंमें दुर्गा नामका स्मरण करने से विपत्तिका सर्व नाश हो जाता है। दुर्गा नाममें असाधारण विपद्नाशिनी शक्ति विद्यमान है। उसमें यह एक अपूर्व क्षमता है कि विपन्न भावसे नाम स्मरण और जप किये जाने पर जीवकी विपत्ति तत्क्षण दूर हो जाती है और जब विपत्ति नहीं रहती तब वह अपूर्व सुखका अनुभव करता है। यदि उस अवस्थामें भी कोई दुर्गाके नामका जप करे तो नामके गुणसे उसमें सुबुद्धि और सदाचारका उदय हो जाता है।

दुर्गे! स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥

[अर्थात् 'हे मात दुर्गे! तुम्हारा सङ्कटमें स्मरण करनेसे तुम प्राणियोंके सब प्रकारके भय दूर करती हो और सुखकी अवस्थामें जो जीव तुम्हारा स्मरण, ध्यान करते हैं, उनको तुम सद् बुद्धि प्रदान कर सन्मार्गगामी बनाती हो। हे दारिद्र्य दुःख हारिणि! हे भव भय हारिणि! समस्त प्राणियोंके उपकारके लिये आपके समान करुणा पूर्ण हृदय और किसका है?']

दुर्गा माताके ध्यान और भजनकी ग्रन्थोंमें अनेक विधियोंका उल्लेख मिलता है। जैसे दुर्गा महारानी महिषासुरका वध करनेके लिये पहिले अष्टभुजा रूपसे पृथ्वी पर अवतरित हुईं, उपरान्त भक्त देवगणके कल्याणार्थ दशभुजा, अष्टादशभुजा और अन्तमें सहस्रभुजा देवी रूपसे प्रकट हुईं थीं। दुर्गाकी इन समस्त मूर्त्तियोंकी कई प्रकारकी पूजा भक्तगण चिर-कालसे करते आ रहे हैं। अष्टभुजा देवी ही काला-न्तरमें बिन्ध्याचल निवासिनी विन्ध्यवासिनी देवी मूर्त्ति रूपमें प्रकटित हुईं। इसी प्रकार भगवान् श्री राम-चन्द्र जी ने दशभुजा दुर्गाकी शरद् कालमें महा पूजा की थी; अतः "शरत्काले महापूजा" के अनुसार संसारमें दुर्गाको शरत् कालीन पूजार्चाका प्रचार हुआ। उक्त दुर्गा मूर्त्तिकी विधिपूर्वक पूजा कर, उसके समक्ष शुद्ध भाव और भक्तिपूर्ण-हृदयसे देवी महात्म्यका पाठ करने पर दशभुजा दुर्गा उपासकके प्रति प्रसन्न हो, उसे अभीष्ट फल प्रदान करती हैं। इसीलिये देशमें शरत्कालीन देवीपूजाका बड़ा महात्त्म्य है और वह आज भी सार्वत्रिक रूपसे अनु-ष्ठित होता देखा जा रहा है।

आर्य ऋषि महर्षियोंने दुर्गा नामका महात्म्य हृदयङ्गम कर, प्रत्यूषकालमें नामोच्चारण के लिये नीचे लिखे श्लोककी रचना की है:—

प्रभाते यः स्मरेन्नित्यं दुर्गा दुर्गाक्षरद्वयम्।
आपदस्तस्य नश्यन्ति तमः सूर्योदये यथा ॥

अर्थात् प्रातःकाल जो मनुष्य प्रतिदिन दुर्गा नामका उच्चारण और माता दुर्गाका स्मरण करता है उसके दुःख, शोकादिका उसी प्रकार तिरोभाव हो जाता है, जैसाकि भुवनभास्करके उदयसे अन्धकार नाशको प्राप्त होता है।

गुप्तार्णवतन्त्रके 'अपराधभञ्जनस्तोत्र' की निम्न-

लिखित पंक्तियाँ दुर्गा नामके महात्म्य पर विशेष प्रकाश डालती हैं—

त्वं काली त्वञ्च तारा त्वमसि गिरिसुता सुन्दरी भैरवी त्वं,
त्वं दुर्गा छिन्नमस्ता त्वमसि च भुवना त्वञ्च लक्ष्मीः शिवा त्वं।
धूमा मातङ्गिनी त्वं त्वमसि च बगला मङ्गलादिस्तवाख्या,
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितवदने कामरूपे कराले ॥

अर्थात् तुम्हीं काली, तुम्हीं तारा, तुम्हीं हिमालय कन्या, तुम्हीं सुन्दरी, भैरवी और तुम्हीं दुर्गा हो। तुम्हीं छिन्नमस्ता, भुवनेश्वरी, शिवा, धूमावती और तुम्हीं मातङ्गी हो। तुम्हीं बगला, तुम्हीं मङ्गला हो। अतएव हे दर्शितस्वरूपे! हे स्वेच्छास्वरूपिणी, हे भयङ्करी देवि! हमारा अपराध क्षमा करो।"—इससे स्पष्ट है कि माता दुर्गा ही दशमहाविद्या हैं और माता दुर्गा ही स्वयं ब्रह्ममूर्ति नारायणी हैं।

दुर्गादेवीकी पापनाशिनी और आपदनिवारिणी शक्तिका हमें पूजामन्त्रोंसे भी प्रत्यक्ष परिचय मिलता है। दुर्गा पूजाके ऋष्यादि न्यास मन्त्र, दुर्गानाम महात्म्यके पूर्णतः परिचायक हैं।—"ऋष्यादिन्यास—अस्य मन्त्रस्य नारद ऋषिर्गायत्री छन्दः दुरितापन्निवारिणी दुर्गा देवता चतुर्वर्गफल प्राप्तये विनियोगः। शिरसि नारद ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि दुरितापन्निवारिण्यै दुर्गायै देवतायै नमः।"

तन्त्रशास्त्रमें दुर्गा मुद्रा नामसे एक प्रकार की मुद्राविशेषका उल्लेख आया है। दोनों हाथोंकी मुट्ठियों को बांधकर वाम मुष्टि पर दक्षिण मुष्टि रख, मस्तक पर स्थापन करनेसे दुर्गा मुद्रा होती है। पूजाके समय इस मुद्राका अवलम्बन करनेसे मन्त्र देवतागण आनन्दित और सन्तुष्ट होते हैं।

तन्त्रसारके दुर्गाशतनामस्तवमें दुर्गा नाम महात्म्यका सुन्दर प्रतिपादन किया गया है। इसमें भी माता दुर्गाकी निखिल जगद्व्यापिनी अद्भुत अजेय शक्तिकी झाँकी मि[illegible] है। श्रीमद्देवी भागवतके नवमस्कन्धके शेष अध्यायमें दुर्गापूजा विधि पर विशेष विवरण दिया है। वहाँ स्पष्ट उल्लेख है कि "जिनके स्मरण मात्रसे घोर विपत्ति और सब प्रकारके भय क्षणमें दूर हो जाते हैं, ऐसी दयामयी माता दुर्गाका भजन स्मरण और ध्यान कौन नहीं करता; अर्थात् उसकी कृपा भिक्षाके सभी चराचर जीव इच्छुक और उपासक हैं। यही अद्भुता शिवा हम सबोंकी माता और जगत्-जननी हैं। यही अन्तर्यामिनीरूपिणी माता निखिल बुद्धिकी अधिष्ठात्री देवी हैं। दुर्गम संकटका नाश करनेमें समर्थ होनेसे ही यह 'माता दुर्गा' नामसे विश्वविख्यात हैं। सृष्टि स्थिति नाशकारिणी, मूल प्रकृति रूपा भी यही भगवती दुर्गा हैं। जिनके स्मरण मात्रसे मानव-जन्म सफल और सार्थक हो जाता है। चतुर्दश मनु इन्हींके पाद-पद्मोंका ध्यान करके मनुत्वको प्राप्त हुए और देवतागण भी इन्हींकी उपासना द्वारा अपने-अपने पदको पहुँच गये। 'विश्वसारतन्त्र' में दुर्गा मन्त्रके महात्म्यकी कथाका सुन्दर वर्णन उल्लिखित है। यहाँ हम अन्य देवताओंकी चर्चाको परे रख कर रुद्र देवताके ही सम्बन्धमें लिखते हैं। स्वयं देवाधिदेव महेश्वर जो अपने मस्तक पर गङ्गाको धारण कर गङ्गाधर नामसे अभिहित हुए; इसमें भी दुर्गा मन्त्रका ही प्रभाव था—

"यस्या प्रसादमात्रेण भवेद्गङ्गाधरः स्वयं।"

— (विश्वसारतन्त्र)

माता दुर्गाके अद्भुत लीला-विलासको लक्ष्यमें रख कर ही दुर्गागीता, दुर्गाकवच और दुर्गास्तोत्र आदिकी शास्त्रोंमें रचना की गई है। दुर्गाको प्रसन्न कर उनसे अभीष्ट फल प्राप्त करनेके लिए इनका पाठ किया जाता है। नित्य माला पर जप करनेके निमित्त दुर्गा गायत्रीका भी शास्त्रोंमें उल्लेख है, जो मनुष्यमात्रके पक्षमें कल्याणकारिणी और मोक्षकी दाता है। दुर्गा गायत्रीके नियमित जपसे मनुष्यमें तेज और बल वीर्यकी वृद्धि हो कर, उसकी संसारयात्रा सुगम हो जाती है। हृदयमें पवित्रताका उदय हो कर दुर्गाभक्तिमें मनकी एकाग्रता होती है। वह दुर्गा गायत्री नीचे लिखे अनुसार है:—

"ॐ विश्वाम्बिकायै विद्महे कन्याकुमार्यै—
धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्।"

कुरुक्षेत्रमें कौरव-पाण्डव-युद्धके ठीक प्रारम्भमें भगवान् श्रीकृष्णने अर्जुनको शत्रुकी पराजयके लिए पवित्र हो कर दुर्गास्तोत्र पढनेका उपदेश दिया था। तदनुसार श्रीकृष्ण-सखा अर्जुनने रथसे उतर कर कृताञ्जलिपूर्वक दुर्गाजीकी स्तुति की थी। "नमस्ते सिद्ध सेनानी" प्रभृति मन्त्रोंसे दुर्गास्तोत्र आरम्भ करके "भूतिर्भूतिमतां संख्ये वीक्ष्यसे सिद्धचारणैः" पर्यन्त दुर्गास्तोत्र पढ़े जाने पर पुत्रवत्सला माँ दुर्गा अर्जुनकी भक्ति देख कर अन्तरिक्षसे पृथ्वी पर अवतीर्ण हुईं और श्रीकृष्णके आगे अवस्थिता हो कर बोली—'हे नर वीर! स्वयं नारायण तुम्हारे सखा सहायक और सारथी हैं; अतः रणक्षेत्रमें तुम शत्रुओंसे अजेय हो; तुम्हें वज्रधारी इन्द्र भी जीतनेमें असमर्थ हैं।" इतना कह कर वरदात्री दुर्गादेवी तत्क्षणात् अन्तरिक्षमें जाकर लुप्त हो गईं।

अतः ऊपरके उद्धरणोंसे सिद्ध है कि संसारी जीवोंको माता दुर्गाकी उपासना, ध्यान, स्मरण करना अत्यन्त आवश्यक है। बिना इसके मानवकी गति नहीं है। गृहसे यात्रा करते समय जो दुर्गा नामका उच्चारण करते हैं उनके मार्गके विघ्न और अमङ्गल का नाश हो जाता है। घोर वज्राघात और मुसलाधार वृष्टिके समय जो राह चलते हुए कम्पित किन्तु भक्तिपूर्ण हृदयसे माँ दुर्गाका नामोच्चारण करते हैं, उनकी इन महासङ्कटों से तत्काल रक्षा हो जाती है। इस कलिकालमें दुःख शोक और सङ्कटकी निवृत्तिके लिए माता दुर्गाका स्मरण अमृत तुल्य औषधि है। इतने पर भी अज्ञानसे जो उस विपद्नाशिनी, ब्रह्मस्वरूपिणी दुर्गाका स्मरण नहीं करते, उनका जन्म जीवन संसारमें भार स्वरूप है, व्यर्थ है और इहलोक तथा परलोक साधनमें एकान्त रूपसे बाधक है।

भूतानि दुर्गा भुवनानि दुर्गा
नराः स्त्रियश्चापि सुरासुरादिकम्।
यद्यद्धि दृश्यं खलु सैव दुर्गा-
दुर्गा स्वरूपादपरं न किञ्चित्॥

स्वर्ग, मर्त्य, पाताल लोकोंमें जो जड़, चेतन, स्थावर, जङ्गम, स्त्री, पुरुष, देवता, दैत्यादि भासमान हो रहे हैं, वे सब दुर्गाके ही विराट रूप हैं। दुर्गतिनाशिनी भगवती दुर्गासे प्रथक् इस संसारमें कुछ भी नहीं है।

मान्य लेखकों और ग्राहकोंसे निवेदन

इस माघ फाल्गुन मासमें कुछ निजी पारिवारिक और संस्था सम्बन्धी कार्योंके कारण मैं कार्यालयमें उपस्थित नहीं रह सकूंगा, अतः 'वसन्ताङ्क' के लिए लेख—"श्री पं० बलजिन्नाथजी शास्त्री बी० ए० उपसम्पादक, मु० पो० कुलगाम (काश्मीर)" इस पते पर भेजने चाहिएं। सोलनमें कार्यालयके स्थानापन्न व्यवस्थापक श्री पं० चन्द्रदत्तजी शास्त्री रहेंगे, अतः व्यवस्था सम्बन्धी पत्र और मनीआर्डर आदि व्यवस्थापक 'श्रीस्वाध्याय' सोलनके पते पर ही भेजे जावें।

निवेदक—

हरदेव शर्मा त्रिवेदी,

सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (शिमला)।

पर्वव्रतादि निर्णय

[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी]

पौष शुक्ल	११ सोमवार	ता० २५	दिसम्बर	पुत्रदा एकादशी व्रत
	१३ बुधवार	ता० २७	,,	प्रदोषव्रत, ताजिया
	१५ शुक्रवार	ता० २९	,,	सत्यव्रत माघस्नानारम्भ
माघ कृष्ण	४ मंगलवार	ता० २	जनवरी	श्रीगणेशजयन्ती सङ्कष्टचतुर्थीव्रत चन्द्रोदय नवीस्टे. टा. १०।१५
	११ बुधवार	ता० १०	,,	षट्तिला एकादशीव्रत
	१२ गुरुवार	ता० ११	,,	प्रदोषव्रत
	१३ शुक्रवार	ता० १२	,,	लोहड़ी
	१४ शनिवार	ता० १३	,,	मकर संक्रान्ति मु० ३० पुण्यं परदिने
	३० रविवार	ता० १४	,,	मौनी ३० संक्रान्ति पुण्यकाल मध्याह्न पर्यन्त
माघ शुक्ल	१ सोमवार	ता० १५	,,	चन्द्रदर्शन
	५ गुरुवार	ता० १८	,,	वसन्तपञ्चमी श्री ५
	७ शनिवार	ता० २०	,,	अचला सप्तमी रथ ७
	८ रविवार	ता० २१	,,	भीष्माष्टमी
	११ बुधवार	ता० २४	,,	जया एकादशी व्रत
	१२ गुरुवार	ता० २५	,,	प्रदोषव्रत भीष्म १२
	१४ शनिवार	ता० २७	,,	सत्यव्रत
	१५ रविवार	ता० २८	,,	रविपुष्ययोग माघी १५ माघस्नान समाप्ति
फाल्गुन कृ०	३ बुधवार	ता० ३१	,,	श्रीगणेश ४ व्रत चन्द्रोदय नवीन स्टे० टा० ९।५१
	८ सोमवार	ता० ५	फरवरी	श्री सीताजन्माष्टमी
	११ गुरुवार	ता० ८	,,	विजयाएकादशी व्रत
	१३ शनिवार	ता० १०	,,	शनिप्रदोषव्रत
	१४ रविवार	ता० ११	,,	श्रीमहाशिवरात्रि १४ व्रत
	३० सोमवार	ता० १२	,,	सोमवती अमा० कुम्भसंक्रान्ति मु० ३० पुण्यकाल ६।४७ याव.
फाल्गुन शु०	२ बुधवार	ता० १४	,,	चन्द्रदर्शन श्रीरामकृष्ण परमहंस जयन्ती
	८ सामवार	ता० १९	,,	होलाष्टकारम्भ
	११ गुरुवार	ता० २२	,,	आमला एकादशी व्रत
	१३ शनिवार	ता० २४	,,	शनिप्रदोषव्रत
	१५ सोमवार	ता० २६	,,	होलिकादहन, सत्यव्रत, महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्य जन्यती, ईद
प्र० चैत्र कृ०	१ मंगलवार	ता० २७	,,	वसन्तोत्सव, होलिकाभस्मधारण' आम्रपुष्पप्राशन, श्वपच-स्पर्श, मेला आनन्दपुर साहब होला १
	३ शुक्रवार	ता० २	मार्च	श्रीगणेश ४ व्रत चन्द्रोदय न० स्टे० टा० १०।१७
	७ मंगलवार	ता० ६	,,	श्रीशीतला ७ शीतलापूजन
	८ बुधवार	ता० ७	,,	श्री शीतलाष्टमी
	११ शनिवार	ता० १०	,,	पापमोचनी एकादशी व्रत

प्र० चैत्र कृ० १२	रविवार ता० ११	मार्च	प्रदोषव्रत
१४	मंगलवार ता० १३	,,	मीन संक्रान्ति मु० ३० मेला पृथूदक (कुरुक्षेत्र)
प्र० चैत्र शु० १	बुधवार ता० १४	,,	संक्रान्ति पुण्यकाल मध्याह्न यावत् चान्द्र संवत्सर शकः १८६७ सं० २००२ वि० आरम्भ, तैलाभ्यङ्ग, पुरुषोत्तम (मल) मासारम्भ वर्षेश पूजनं फलश्रवणञ्च
२	गुरुवार ता० १५	,,	चन्द्रदर्शन
११	शनिवार ता० २४	,,	कमला एकादशी व्रत
१२	रविवार ता० २५	,,	प्रदोष व्रत
१५	बुधवार ता० २८	,,	सत्यव्रत
द्वि० चैत्र कृ० ४	रविवार ता० १	अप्रैल	श्रीगणेश चतुर्थीव्रत
११	रविवार ता० ८	,,	पुरुषोत्तमा एकादशी व्रत
१३	मंगलवार ता० १०	,,	भौमप्रदोष व्रत
३०	गुरुवार ता० १२	,,	अमा० मलमास समाप्ति
द्वि० चैत्र शु० १	शुक्रवार ता० १३	,,	नवरात्रारम्भ, घटस्थापन, मेष संक्रान्ति मु० ३० पुण्यकाल मध्याह्न यावत्, श्री महर्षि गौतमजयन्ती, मेला वैशाखी
३	रविवार ता० १५	,,	गणगौरी पूजन
८	गुरुवार ता० १६	,,	दुर्गाष्टमी भवान्युत्पत्तिः
९	शुक्रवार ता० २०	,,	श्रीराम नवमी व्रत

चैत्रराज (वर्षराज) निर्णय

चैत्रशुक्ल प्रतिपदाको जो वार हो वही उस वर्षका राजा होता है। परन्तु इस वर्ष चैत्र अधिक (दोमास) हैं, अतः धर्मसिन्धु, पुरुषार्थचिन्तामणी, व्रतराज, व्रतरत्नाकर, मयूखादि महानिबन्धोंके मतसे अधिक चैत्र (प्रथम चैत्र) शुक्ल प्रतिपदाका वार ही वर्षेश (राजा) होता है और उसी दिन वर्षारम्भनिमित्तक सब कार्य अभ्यङ्ग स्नान, निम्बपत्रभक्षण, वर्षेशादिपूजन, ध्वजपूजन और पञ्चाङ्ग श्रवणादि कार्य करने चाहियें। शास्त्रशुद्ध नवीन सूक्ष्म गणनानुसार प्रथम चैत्रशुक्ल १ का क्षय है। अर्थात् प्रथम चैत्रकृ० ३० बुधवार ता० १४ मार्चको प्रातः ६।३२ से प्रतिपदा प्रारम्भ होकर गुरुवार १५ मार्चके सूर्योदयसे ३ घटी पहिले ही समाप्त हो जाती है। अतः शुद्ध मानसे इस वर्षका सम्राट् बुध है, एवं वर्षारम्भ निमित्तक सब कार्य भी बुधवार ता० १४ मार्च १९४५ को ही प्रातः नये स्टैण्डर्ड टाइमसे घं० ६ मि० ५८ के उपरान्त करने चाहिएं। स्थानाभावसे सभी धर्मशास्त्रोंके प्रमाण न देकर यहाँ केवल 'धर्मसिन्धु' का एक ही प्रमाण देना पर्याप्त होगा— प्रतिपद्वत्सरारम्भे ग्राह्या पूर्वैव सर्वदा। मलमासो यदा चैत्रौ वर्षारम्भस्तदा मले॥ न तु शुद्धे॥ तत्र चैत्र शुक्ल प्रतिपद् वत्सरारम्भः। तत्रौदयिकी प्रतिपद् ग्राह्या, दिनद्वये उदय व्याप्तौ अव्याप्तौ वा पूर्वा (ध० सि०)

सूर्यसिद्धान्त ग्रहलाघव मकरन्द आदिकी प्राचीन स्थूल गणनासे प्रतिपदाका क्षय नहीं है; अतः उनकी गणनासे वर्षका राजा बृहस्पति और गुरुवार १५ मार्चका वर्षारम्भ होगा। उत्तरभारतके स्थूल गणितके सब पञ्चाङ्गोंमें यही लिखा रहेगा। परन्तु वास्तविक दृष्टिसे यह ठीक नहीं होगा। —सम्पादक

आह्वान

[कवयिता — कविभूषण श्री उदयभानु जी शर्मा 'हंस']

तन्त्री के तार बजा जाओ।
इक मधुमय तान सुना जाओ॥

जिससे नभके तारे टूटें,
जिससे मधुकी धारें छूटें,
जिससे रस रसिक सदा लूटें,
उस वीणाकी स्वरलहरी पर
सप्रेम प्रेम-पद गा जाओ।
इक मधुमय तान सुना जाओ॥

★

तुम छुपते भी हो स्पष्ट नहीं,
औ सम्मुख आते भी न कहीं,
ये लीलायें कर चकित रहीं,
इस भवबन्धनको तोड़ फोड़,
सीधा सन्मार्ग दिखा जाओ।
इक मधुमय तान सुना जाओ॥

★

स्वप्नोंका जगत बसाऊंगी,
उसमें तुमको बिठलाऊंगी,
फिर मैं त्वन्मय हो जाऊंगी।
मेरी नैराश्य—अमामें तुम
नव आशादीप जला जाओ।
इक मधुमय तान सुना जाओ॥

★ ★ ★ ★

जब आते हो सो जाती हूँ,
जब जाते हो खो जाती हूँ,
अपनेमें लय हो जाती हूँ,
बस! तुम निशीथमें चुपकेसे
दे दर्शन मग्न बना जाओ।
इक मधुमय तान सुना जाओ॥

★

इक बार स्वप्नमें आये थे,
कुछ साथ हाथमें लाये थे,
मैंने तो आंसू पाये थे,
फिर ज्ञात नहीं क्या हुआ तभी,
वह आ कर जरा बता जाओ।
इक मधुमय तान सुना जाओ॥

★

सब हर्ष जगतने छीन लिये,
सुख-पुष्प भाग्यने बीन लिये,
जलसे विभिन्न कर मीन लिये,
अब दीन द्रौपदीकी आ कर
तुम लुटती लाज बचा जाओ।
इक मधुमय तान सुना जाओ॥

दैवज्ञकी दृष्टिमें संसारचक्र

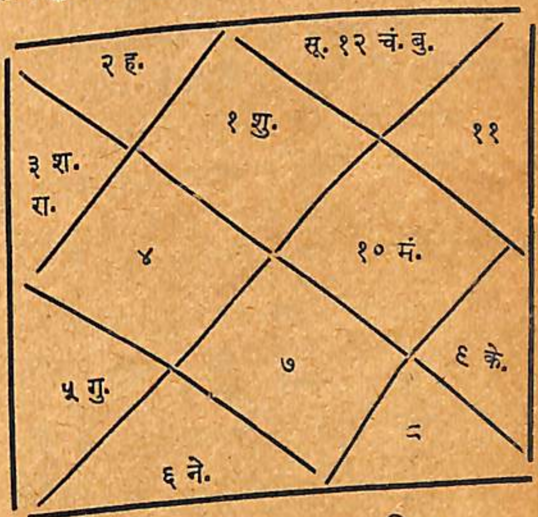
सन् १९४५ ई० और सं० २००२ वि०का भविष्य

[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी, सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय']

'श्रीस्वाध्याय' के अनेक पाठकोंने इस 'हेमन्ताङ्क' में सं० २००२ वि० और सन् १९४५ का भविष्य विस्तृतरूपमें प्रकाशित करनेका आग्रह किया है। हमारे पाठकोंकी रुचि ज्योतिर्विज्ञानकी ओर अधिकाधिक बढ़ती जा रही है। अतः उनके सन्तोषार्थ हम यहाँ सन् १९४५ और सं० २००२ का भविष्य गम्भीर अध्ययन करके शास्त्रीय भूमिका पर लिख रहे हैं। वर्षभरका भारतीयराष्ट्र और अन्य राष्ट्रान्तरोंका सामाजिक, सामरिक, राजनैतिक और व्यापारिक भविष्य स्थलसंकोचके कारण इसी अङ्कमें पूरा नहीं आ सकेगा, एतदर्थ क्रमशः आगामी 'वसन्ताङ्क' में यह लेख पूर्ण होगा।

सन् १९४५ ई०

माघ कृष्ण ३ सोमवारको ईसाई जगत्का नववर्ष १९४५ प्रारम्भ हो रहा है। इसी माघ मासमें पाँच शनि और रविवार हैं। साथ ही शनि मंगलका प्रतियोग और शनि गुरुका वक्री चलना तथा वर्षारम्भमें मंगलका अस्त रहना इत्यादि योग शुभ सूचक नहीं है। इन योगोंसे वर्षारम्भमें ही माघसे चैत्र तक संसारमें कई अनिष्टप्रद घटनाएँ घटित हो जावेंगी। युद्धकी भयङ्करता बढ़ेगी। युद्धोपद्रव भूकम्प अतिवृष्टि जलप्लावन अग्निप्रकोप दुर्भिक्ष रोगादि आधिदैविक आधिभौतिक उत्पातोंसे किसी देशका समाप्त-प्राय हो जाना सम्भव है। दक्षिण पश्चिमके किसी सीमावर्त्ती प्रदेश पर इन ग्रहोंका अनिष्ट परिणाम अधिक होगा। मित्रराष्ट्रोंके कर्णधारोंका परस्पर मिलन आवागमन और लम्बी परामर्श होगी। ये तीन मास भारतके लिए भी विशेष अच्छे नहीं हैं। व्यापारको स्थिति डावांडोल रहेगी। कहीं शीताधिक्य हिमपात अतिवृष्टि वायुप्रकोपसे हानि होगी तो कहीं दुर्भिक्ष रोग एवं आधिदैविक आधिभौतिक उपद्रवोंसे जनता पीड़ित रहेगी। ये ३ मास व्यतीत होने पर हमारा विक्रमी नया सम्वत् भी प्रारम्भ हो जायेगा। उसकी वर्षलग्न कुण्डली यह है—



संवत् २००२ का भविष्य

नभोमण्डलमें ग्रह नक्षत्र तारागण परस्पर वक्रमार्गगतिसे भ्रमण करते हुए आकर्षण-विकर्षणके द्वारा प्रतिक्षण भूमण्डलके वातावरणमें नित्य नवीन परिवर्तन करते रहते हैं। हमारे सौर-जगत्के शिशुमारचक्रस्थ ग्रहोपग्रहोंकी शुभाशुभ स्थितिका प्रभाव इस भूगोल पर निश्चित रूपसे पड़ता है। वह शुभाशुभ-स्थिति पञ्चाङ्गके सूक्ष्मगणित द्वारा निश्चित होती है। तदनुसार सं० २००२ की ग्रहस्थिति ज्योतिश्शास्त्रानुसार हमें संसारके लिए पूर्ण

शान्तिदायिनी एवं सुखप्रद प्रतीत नहीं होती। चाहे भले ही राजनीतिके धुरन्धर विद्वान्, अर्थशास्त्री एवं भौतिकविज्ञानवादी, युद्धनीतिनिपुण लोग और शान्तिप्रिय सज्जन शीघ्र ही युद्धका अन्त और सत्य-युगी शान्तिपूर्ण साम्राज्यके सुखद-स्वप्नोंकी सृष्टि करते रहें, किन्तु ज्योतिर्विज्ञानके अनुसार ग्रहस्थिति इस नवीनवर्षमें ऐसे शुभ लक्षणोंकी सूचना नहीं देती। गत तीन-चार वर्षोंसे गुरुदेवकी गति बड़ी विचित्र हो रही है। अतिचारी होकर एक वर्षमें ही तीन-तीन राशियोंका स्पर्श कर रहे हैं। इसका फल युद्धके लिए बहुत भयानक लिखा है —

अब्द मध्ये यदा जीवः क्रमाद्राशित्रयं स्पृशेत्।
तदा सुभट कोटिभिः प्रेतपूर्णा वसुन्धरा॥

गुरुके अतिचारमें ही शनि वक्री हो रहे हैं, ये भी अशान्ति और विनाशके द्योतक हैं —

अतिचारगते जीवे वक्रीभूते शनैश्चरे।
हाहाभूतं जगत्सर्वं रुण्डमाला महीतले॥

ये योग इस वर्षमें भी बन रहे हैं, अतः अभी विश्वशान्तिकी आशा रखना दुराशामात्र है।

इस वर्षके सम्राट् पद पर (सूक्ष्म नवीनगणित से) बुध महाराज आसीन हुए हैं और वर्षप्रवेश मेष लग्नके कन्या नवांशमें हुआ है। वर्षेश बुध कालचक्र और वर्षचक्रके व्ययस्थानमें गये हैं। प्रथम तो सम्राट् बुध चञ्चल (अस्थिर) प्रकृतिके हैं और दूसरे नीचराशिके होकर सूर्यचन्द्रके साथ व्ययमें विराज रहे हैं, इन पर शनि नेपच्यूनकी पूर्ण दृष्टि भी है, अतः ये अपने शासनमें संसारकी महा-शक्तियोंमें कितना कल्पनातीत परिवर्तन कर देंगे और भूमण्डलके प्राणियोंका कितना विनाश या कायाकल्प करेंगे, इसकी कल्पना करना कठिन है। व्यापार व्यवसाय और बौद्धिककार्यों पर बुधका प्रभाव है, अतः यह वर्ष संसारके व्यापार स्कूल कालेज शिक्षक कौन्सिल इत्यादिके लिए प्रतिकूल रहेगा। व्यापारियोंको लाभकी अपेक्षा हानि अधिक होगी। बिना कण्ट्रोलका व्यापार बहुत कम रहेगा। अनुचित लाभ, असत्य व्यवहार और ब्लेकमार्केटके सम्बन्धमें व्यापारियों पर अभियोग अधिक चलेंगे। शासकोंकी ओरसे व्यापार पर कड़ा नियन्त्रण होने से व्यापारियोंमें चिन्ता व्यापेगी। वर्षके महा-मन्त्री शुक्र वर्षकुण्डलीमें लग्नमें स्थित है और लग्नेश मंगल उच्चका होकर दशमस्थानमें स्थित है। शुक्र मंगलका केन्द्रयोग और गुरु शुक्रका त्रिकोणयोग बना है, इन योगोंके कारण आर्य और अनार्य लोगोंमें संघर्ष अधिक होगा। इस वर्षमें रोगोपद्रव और प्राकृतिक उत्पात भी अधिक होंगे।

भारतवर्ष

भारतीय प्रजासत्ताका कारक ग्रह चन्द्रमा वर्ष-कुण्डलीमें व्ययस्थानमें रविबुधसे युक्त है और ब्रिटिश सत्ताका कारकग्रह शनि, राहुसे युक्त तृतीयस्थानमें बैठकर सूर्य चन्द्र और वर्षेश बुधको पूर्णदृष्टिसे देख रहा है, अतः ब्रिटिश शासकोंकी ओरसे भारतीय गत्यवरोध दूर करने और औपनिवेशिक स्वराज्य देने की चर्चा विशेषरूपसे होगी। साम्प्रदायिक मतभेद और कलह भी होंगे। कुछ देशीराज्योंकी प्रजा पर भी कई प्रकारके प्रतिबन्ध लगेंगे, परन्तु अधि-कांश देशीराज्योंमें नवीन सुधार होंगे और प्रजाके कष्ट निवृत्त होंगे। किसी एक बड़े नरेश और राष्ट्रिय-महापुरुष नेता एवं दो साहित्यिक कलाकारों की मृत्युसे भारतको आघात पहुँचेगा। राष्ट्रिय-महासभा (कांग्रेस) का भगीरथ उद्योग और चिरसञ्चित प्रभाव प्रयत्नादि सभी निश्चेष्टसे होते दिखाई देने लगेंगे। विधर्मियोंके साथ की हुई सन्धि या एकताका परिणाम विपरीत होगा। प्रजा पर शासकोंकी वक्रदृष्टि रहेगी। राजा प्रजाको अनेक आपत्तियोंका सामना करना पड़े। नये-नये नियन्त्रणों और करोंसे प्रजा त्रस्त रहे। धार्मिक स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप करने वाले कुछ नियम बनने से धार्मिक प्रजामें असन्तोष बढ़ेगा। राजनैतिक गत्यवरोधको दूर करनेके लिए नेताओंको महान्

त्याग एवं परिश्रम करना पड़ेगा। वर्षलग्न और वर्षेश लग्नकुण्डलियोंकी ग्रहस्थितिसे ज्ञात होता है कि इस वर्षमें भारतका प्रश्न सुलझानेके लिए देश-विदेशमें भी पर्याप्त प्रयत्न होगा। वर्षवर्षेश कुण्डलीमें लग्नमें क्रमशः शुक्र गुरुकी स्थितिसे कुछ आशा है कि किसी महान् नेताके प्रबल प्रभाव और प्रयत्नसे कुछ समयके लिए सभी मतभेद भुला कर राष्ट्रिय शक्ति सङ्गठनके द्वारा अथवा किसी अन्य कारण विशेषसे बाध्य होकर बृटिश शासकोंको भारतीय स्वतन्त्रताके लिए कागजी घोषणा करनी पड़े। किन्तु यह क्रियात्मक नहीं होगी, घोषणाके रूपमें सुना दी जावेगी कि युद्धोत्तरवर्ति-शासनमें भारतको अमुक स्थान दिया गया है। राजनैतिक समस्याएं न सुलझने तक यह घोषणा केवल कागजी ही रहेगी। कौन्सिलों और असेम्बलियोंमें प्रजापक्षका बहुमत रहेगा।

भारतको इस वर्ष कुछ कुयोगोंके कारण रोगोत्पातादि अनेक आपत्तियोंका सामना करना पड़ेगा। ज्वर, प्लेग, चेचक, विषम (टाईफाईड) मलेरिया आदि रोगोंसे तथा अग्निकाण्ड भूकम्प स्फोटक द्रव्योंसे कलाकेन्द्रोंकी हानि और मृत्युसंख्या अधिक होगी। पूर्वीय देशोंमें दुर्भिक्ष होगा। शीतकालमें (विशेषकर दिसम्बरसे मार्च ४६ तक) प्राकृतिक उपद्रव और रोगवृद्धि अधिक होगी। इस वर्षमें शनिमङ्गलराहुके एकत्र होनेसे बङ्गाल, बिहार उड़ीसा, आसाम, बम्बई, मद्रास, सीमान्त, सिन्ध, मरुस्थल, नेपाल और मध्यप्रान्त आदि प्रान्तोंमें नानाविध कष्ट उत्पन्न होंगे। जल वायु अग्नि और शीतका प्रकोप तीव्रतर रहेगा। पृथ्वी पर धान्यकी उत्पत्ति न्यून होगी। 'सर्वतोभद्र-चक्र' के विचारसे पूर्वीय देशोंके लिए यह वर्ष विशेष भयानक रहेगा। वहाँ जन धनकी हानि तो अधिक होगी ही परन्तु साथ-साथ आधिदैविक आधिभौतिक उपद्रव और राजनैतिक धार्मिक व्यापारिक क्रान्ति भी होगी। भारतकी पूर्वोत्तरीय सीमाओंको युद्धोपद्रव से बचानेके लिए शासकोंकी ओरसे पूर्ण प्रयत्न होगा। भारतकी आर्थिक स्थिति बहुत चिन्ताकारक रहेगी। महंगाईकी चिन्तासे प्रत्येक मनुष्य दिनरात परिश्रम करके भी आयका उपयुक्त सुख नहीं उठा सकेगा। विज्ञान शिल्प कलाकौशलकी उन्नति होगी। नये नये कारखाने खुलेंगे। कृषिसुधारके साधन बढ़ानेके उपाय निकाले जावेंगे। पशुधनके ह्राससे दुग्धघृतादि पदार्थ का अभाव सा रहेगा। फल मेवा और खाद्यसामग्री की स्थिति ठीक न रहेगी। वस्त्र और अन्न शर्करा तैलादि पदार्थों पर कण्ट्रोल रहनेके कारण सर्वसाधारण जनताको आवश्यकतानुसार प्राप्त न हो सकेंगे। कहीं दुर्भिक्षके कारण क्षुधासे, कहीं शीतकालमें शीताधिक्यसे तो कहीं ग्रीष्ममें उष्णतावृद्धिसे रोगोत्पन्न होकर प्रजाकी हानि होगी। लोहा पीतल ताम्बा धातुमात्र, लकड़ी कोयला और रुई कपासका भाव प्रायः तेज रहेगा। मई तक अन्नका भाव कुछ सस्ता रहकर आगे विशेष तेज होगा। गुड़ शक्कर हल्दी का भाव कुछ सस्ता रहेगा। सितम्बरसे रुईमें अच्छी तेजी चलेगी। वर्षा अनियमित होगी। कहीं थोड़ी तो कहीं जल प्रलय और कहीं दुर्भिक्ष पड़ेगा।

भारतीय नेता—

आधुनिक युगके महर्षि महामना पूज्य मालवीयजी महाराजको १९४५ के फरवरीसे अक्तूबर तकका समय स्वास्थ्यकी दृष्टिसे ठीक नहीं है। निर्बलता शैथिल्य हृद्रोग स्नायविक विकार एवं उदरव्याधि अपचनादिकी शिकायत रहेगी। कभी कभी अचेतना वा मूर्च्छा होना भी सम्भव है। सन् १९४६ में यही व्याधियाँ विशेषरूपसे जागृत होनेके कारण वह वर्ष विशेष अनिष्टप्रद रहेगा। विश्ववन्द्य महात्मा गान्धीजीको पराक्रमेश-षष्ठेश गुरुकी महादशा चल रही है। गुरु पराक्रमेश होनेके कारण पुरुषार्थ पराक्रम एवं त्याग तो पूर्ण रूपेण होता है, परन्तु षष्ठेश होनेके कारण विपक्षियों द्वारा अनेक विघ्न बाधाएं सम्मुख आ जाती हैं। इस वर्षमें आपकी आध्यात्मिक शक्ति बढ़ेगी, उत्कर्ष होगा। अप्रैलसे आगे स्वास्थ्यमें पुनः निर्बलता आवेगी। गुरुका मङ्गलसे राशि सम्बन्ध होनेके कारण रक्ताभिसरणकी अनियमितता रक्तकी न्यूनता और बेचैनी होगी। विघ्नबाधाओंके रहते हुए भी आप

चांदी अलसी और सर्की (कांकड़े) का अचूक चांस

[लेखक—ज्योतिषरत्न श्री पं० हरिशङ्कर जी ज्योतिषाचार्य दैवज्ञभूषण]

[इन चांसोंके लेखक तेजी-मन्दीके विशेषज्ञ सुप्रसिद्ध विद्वान् हैं। शास्त्रीय गम्भीर विचार एवं अनुभवसे जो लिखा गया वह यथार्थ प्रतीत होता है। पीछे जब-जब भी ये योग आये हैं, तब चांस ठीक उतरा है। अतः हम अपने व्यापारी पाठकोसे अनुरोध करेंगे कि वे इसका अनुभव करें और लाभ उठावें। इस विज्ञानका महत्त्व और सत्यता सिद्ध करने के लिए 'श्रीस्वाध्याय' के आगामी अङ्कोंमें विद्वान् लेखकके अचूक स्पेशल चांस निरन्तर प्रकाशित हुआ करेंगे। जो अन्यत्र मिलना कठिन है। —सम्पादक]

चांदी का खास चान्स

आगामी ता० १० जनवरीसे १८ जनवरी १९४५ तक चांदीमें ३ से ४॥ टके तककी तेजी होगी। बाजार क्रमशः बढ़ेगा। जो लोग इस प्रकरण पर विश्वास न रखते हों उन्हें भी हमारा विशेषरूपसे आग्रह है कि वे इसे नोट करें और लाभ उठावें। यदि पाठक लाभ उठायेंगे तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे और आगे इस विषय पर बिशेष रूपमें लिख सकेंगे।

अपने लक्ष्यकी ओर अग्रसर होंगे। श्री पण्डित जवाहरलालजी नेहरूके लिए यह वर्ष साधारण है, उत्तरार्धमें स्वास्थ्यमें कुछ निर्बलता आयेगी। सन् १९४६ विशेषरूपसे उत्कर्षकारक होगा। श्री. त्यागमूर्ति गोस्वामी गणेशदत्तजी महाराजके स्वास्थ्य एवं उत्कर्ष के लिए वर्ष उत्तम है। आपके व्यापकप्रभाव पुरुषार्थ एवं त्यागसे कई अभूतपूर्व ठोस कार्य होंगे। विगत सं० १९९९ से आगामी सम्वत् २०१० तक सब क्षेत्रों में आपका प्रभाव बढ़ेगा, एवं उत्तरोत्तर अधिकाधिक उत्कर्ष होगा। भारतके वर्तमान वायसराय श्री लार्ड वेवल महोदयको इस वर्षके पूर्वार्द्धमें किसी महत्त्वपूर्ण मन्त्रणाके लिए यूरोप यात्रा करनी पड़ेगी। भारतीय समस्याओंको सुलझानेका प्रयत्न भी आपकी ओरसे होगा। विक्रम सं० २००२ के आरम्भसे (ता० १५ मार्चसे) दो मास पर्यन्त विश्वशान्ति वा सन्धिचर्चाके मेघ विशेषरूपसे मँडराते रहेंगे। (शेष 'वसन्ताङ्क' में)

अलसी और सर्की (बिनौला) का अव्यर्थ चांस

बहुत शीघ्र ही अलसी और सर्की (कांकड़े) में जनवरी माहमें एक बार मन्दीका रियेक्शन आवेगा और वह मन्दी दोनों वस्तुओंमें आठ आनेसे रुपये मण तक हो सकेगी। बस, इस मंदीके रियेक्शनमें अलसी सर्कीका स्टाक करना ठीक होगा। बादमें बाजारोंमें क्रमात् तेजी प्रारम्भ होते हुए जुलाई मासके लगभग अलसीमें २॥ से ३॥ टके और कांकड़ेमें १॥ से २॥ टकेकी भारी तेजी होगी। यह योग पहले कई बार आया है और ८५ से ९५ प्रतिशत तक सचोट उतरा है। अतः व्यापारीवर्ग अवश्य लाभ लें। यदि कहीं पर कण्ट्रोलकी पाबन्दी आदिके कारण भी होंगे, तो भी कम रूपसे प्रभाव अवश्यमेव होगा यह निश्चय है। इन चांसोंकी परीक्षा करके ठीक या गलत जैसे भी उतरें उसकी सूचना सम्पादक महोदय 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (शिमला) के पते पर भेजें।

आगामी अङ्कोंमें तेजी मन्दीके प्रकरणमें सविशेष रूपसे सोना चांदी रूई अलसीकी अद्वितीय सचोट लाइन प्रकाशित की जावेगी। अतः आगे 'श्रीस्वाध्यय' का प्रत्येक अङ्क सावधानीसे पढ़ते रहिये।

व्यापारविमर्श (तेजीमंदी)

[लेखक—श्री पं० बिहारीलालजी शर्मा 'दैवज्ञ']

ता० २५ दिसम्बर दिनके ६ बजेसे—

चलती मन्दीमें समाचार तेजीके मिलें। रुई १०।१५। काली मिर्च हेसियन, अरण्डी, मूंगफली ८) १०) रु०। चांदी बिनौला २) २॥) रु०। गेहूँ सोना अलसी १) १॥) रु०के लगभग बढ़ना पाया जाता है। सारांश यह है कि प्रसंगवश आई हुई तेजी का उपयोग करें। ख्याल रहे मन्दीकी लाइनमें जब तेजी आ धमके तब चतुर व्यापारी ऊंचे भाव में माल बेचकर घटे भाव खरीद करते नफा कमाया करते हैं।

ता० २८ दिसम्बर दिनके ३ बजेसे—

बढ़े हुए भावोंका रंग यहाँ फीका पड़ना मालूम देता है। मतलब मन्दीसे है।

ता० ३१ दिसम्बर रात ८ बजेसे—

बाजारका भाव समान रहे, हवा सस्तेकी चलेगी।

ता० ४ जनवरी १९४५ प्रातः ४ बजेसे—

पहले मन्दी आकर बादमें प्रत्येक वस्तुके भाव बढ़ने लगेंगे। जो हो डंकेकी चोट माल खरीदें, अन्तमें ऊंचे रेट मिलेंगे।

ता० ७ जनवरी दिनके ६ बजेसे—

प्रत्येक वस्तुके भावमें अच्छी घटबढ़ चलते प्रभाव तेजीका रहे। घटे भाव खरीदते जाओ और मिलते मुनाफेसे सौदे सुलटते रहिये।

ता० १० जनवरी दिनके ३ बजेसे—

प्रत्येक वस्तुके मूल्यमें अच्छा चढाव-उतार होकर प्रभाव तेजीका ही रहेगा।

सौर-माघमासका ब्यौरा

[ता० १३ जनवरीसे ११ फरवरी तक]

रुईको आदि ले प्रत्येक मूल वस्तु व धातुके भावमें जोरदार घटबढ चले। रुई ५०) ६०) हेसियन, कालीमिर्च, एरण्डा, मूँगफली २५) ३०) बिनौला १०) १५) अलसी गेहूँ सोना ३, ४, टकेकी तादादमें अपनी-अपनी सीनरी दिखायेंगे। परिणाम तेजीका तमका रहेगा। व्यापार करनेसे पहले सब तरह की स्कीम सोच समझ लें।

ता० १३ जनवरी रात ८ बजेसे—

उतार चढावकी रफ्तार चल रही है, अतः रुई १०) १५) हेसियन, कालीमिर्च, चांदी, बिनौला ३) ४) सोना अलसी गेहूँ १) १॥) टकेकी तादादमें दौड़धूप मचायेंगे। ऐसे मौके नजराणा लगा पेटे में लेवाली बेचवालीका धन्धा करें।

ता० १७ जनवरी प्रातः ४ बजेसे—

बाजारमें कुछ नरमी रहेगी।

ता० २० जनवरी दिनके १० बजेसे—

कोई खास योग मालूम नहीं देता।

ता० २३ जनवरी सायं ५ बजेसे—

कहीं से रंजकी खबर सुनाई देगी और कहीं से खुशखबर भी मिले। बाजारमें घटबढ होगी।

ता० २६ जनवरी रात ११ बजेसे—

बाजारमें घटबढ। रुईमें ५) ७) ऊपर नीचे होगा।

ता० ३० जनवरी प्रातः ५ बजेसे—

मारकेटमें मन्दीकी हवामें तेजीका झोंका आवेगा।

ता० २ फरवरी दिनके १२ बजेसे—

फेरफार होते हुए भी इस मौके भावमें तेजी का तरारा मालूम देगा। मानलो रुई ८) १०) बढ़े तब एरण्डी मूँगफली आदि कितने मंहगे होंगे परिणाम निकाल लीजिये। माल खरीद करनेकी

खुली राय है। और बढ़े भाव नफासे सौदा सुधारिये।

ता० ५ फरवरी सायं ५ बजेसे—

मन्दीके ग्रह मन्दे पड़ गये हैं अतः रुई १५)-२०) हैसियन एरण्डी मूंगफली कालीमिर्च १०) १५) बिनौला चांदी ५) ७) सोना असली गेहूँ १॥) २) के लगभग बढ़ेगा। खरीदीका सौदा करें और लगती वस्तुकी तेजी लगाकर उछालेमें सुधारा करें।

ता० ६ फरवरी प्रातः ३ बजेसे—

बाजारमें कोई विशेष परिवर्त्तन नहीं होगा।

सौर फाल्गुनमासका ब्यौरा

[ता० १२ फरवरीसे ता० १३ मार्च तक]

इस मासके ग्रहयोगोंको देखते प्रत्येक वस्तुके भावोंमें अच्छी घटबढ़ चलेगी। रुई ३०) ४०) सोना गेहूँ अलसी १॥) २) चांदी बिनौला ४) ५) एरण्डा हैसियन मूंगफली १०) १५) टकेके लगभग घट बढ़ होते परिणाम तेजीका ही पाया जाता है, अतः व्यापार तेजीके टोनसे करें।

ता० १२ फरवरी प्रातः ८ बजे से—

संयोग अच्छी मन्दीके हैं पर तेजीका तीर भी तनता रहा है। तात्पर्य यह कि चालू तेजीमें मन्दीके अवसरने पदार्पण किया है। व्यापार धन्धा मारकेटका टोन देखकर करें।

ता० १५ फरवरी दिनके दो बजेसे—

एक दिन तेजी वालेका दाव चले तो दूसरा पाशा मन्दी वालेका चित जानिये। रुईमें ८) १०) टकेकी घटबढ़ चलेगी।

ता० १८ फरवरी सायं ६ बजेसे—

या तो १०) १५) टके रुईके साथ साथ और वस्तुओंका भाव भी घटबढ़ लेगा अथवा बाजार सुस्त वातावरणमें रह सकता है।

ता० २२ फरवरी प्रातः ४ बजेसे—

प्रतीत होता है कि प्रत्येक वस्तुके भाव टिके हुएसे रहेंगे।

ता० २५ फरवरी दिनके १ बजेसे—

कोई विशेष योग प्रतीत नहीं होता।

ता० २८ फरवरी रात ८ बजेसे—

यहां इकतर्फा रफ्तार मँहगाईकी पाई जाती है, अतः रुई पाट मूंगफली कालीमिर्च एरण्डा ५) ७) टके, चांदी बिनौला २) २॥) अलसी गेहूँ सोना ॥) ॥।) के लगभग बढ़ना पाया जाता है। सोदा बदस्तूर खरीद करते मुनाफाके मनसूबेसे वापस फरोख्त करें।

ता० ४ मार्च प्रातः ४ बजेसे—

लाइन तेजीमें तेजीकी प्रवृत्त होती है, संयोग मोटी तेजीका बनने जा रहा है, बीचमें कुछ ग्रह मन्दीका एक झोंका लावेंगे, पर वह टिकाऊ नहीं होगा। हर घटे भाव माल लेना चाहिए।

ता० ७ मार्च दिनके ११ बजेसे—

चांदीके रेटमें अवश्य ही जबर पलटा होने वाला है, मतलबके ४) ५) टके चांदीमें घटबढ़ चले तब अन्य वस्तुओंके भावमें भी घटबढ़ होगी ही। व्यापार नजराणा लगाकर करें।

ता० १० मार्च सायं ७ बजेसे—

तेजीकी रफ्तारमें अस्थाई मन्दी आना मालूम देती है। रुई १०) चांदी ४) ५) के लगभग तेज।

सौर चैत्र मासका ब्यौरा

[ता० १४ मार्चसे १२ अप्रैल तक]

इस मासकी ग्रहगणना योग-संयोग देखते प्रत्येक वस्तुके भावमें अवश्यमेव घटबढ़ चलेगी और भावोंकी रफ्तार किसी वस्तुकी तेजी तो किसीकी मन्दीमें मालूम देगी।

ता० १४ मार्च प्रातः ३ बजेसे—

महंगाईकी लाईनमें टेम्परेरी मन्दीका मक्सद मालूम देता है। इस समय रुई ८) १०) टकेका रियेक्शन लेवे। हैसियन मूंगफली एरण्डा कालीमिर्च ४) ६) टके डल हों। चांदी बिनौला २) २॥) घटें।

ता० १७ मार्च दिनके ११ बजेसे—

रोजगारमें रास्ता मंदीकी स्कीमका पकड़ना ठीक है। उछालेमें बेचो। घटे भाव नफासे बिजनस सुधारते जायें।

ता० २० मार्च रात ८ बजेसे—

समयका टोन मन्दी बता रहा है, अतः रुई हेसियन कालीमिर्च मूंगफली एरण्डके भावमें अचानक ही ८) १०) घटना लगता है। बेचाण करके या मन्दी लगाके व्यापार करो।

ता० २४ मार्च प्रातः ४ बजेसे—

चांदीके सौदागरोंको सब प्रकारसे सावधान हो जाना चाहिए। २) बढ़े तो ५) घटनेका योग प्रतीत होता है।

ता० २७ मार्च दिनके १ बजेसे—

जिस वस्तुका भाव ऊंचा मालूम दे उसीको बेचो या मन्दी लगाओ। शरतिया चान्स है। विचार-विडम्बी देखते रह जावेंगे।

ता० ३० मार्च रात ११ बजेसे—

रुई कपासका भाव तेज। बाजारमें साधारण घट बढ़।

ता० ३ अप्रैल दिनके ४ बजे से—

हर वस्तुके भाव दुतर्फा रङ्ग दिखायेंगे।

ता० ६ अप्रैल सायं ६ बजेसे—

तेजीकी चलती तरंगोंमें यदि मंदीका झोंका आया तो वह टेम्परेरी होगा।

पाक्षिक व्यापार-भविष्य

[लेखक—ज्योतिर्विद्यारत्न श्री पं० कृष्णचन्द्रजी शर्मा ओझा केतकी पञ्चाङ्गकर्ता]

माघ कृष्णपक्ष

पूर्व तथा पश्चिम देशोंमें उपद्रव अधिक हो। अग्नि भूकम्प स्फोटक द्रव्योंसे भीति, कृषि तथा मनुष्य हानि अधिक होगी। गेहूँ, चना, अरहर, चांदी, मूंग, अलसी, रुई, हल्दी, मिर्च, सोंठ, तोरिया गुड़, तेल, नमक आदि सर्वक्षारपदार्थ तेज रहेंगे। चावल, उड़द, मसूर सम। सोनामें आन्दोलन बदी १४ से होगा। कपूर, पीपरमेण्ट, क्रिस्टल, औषधी, घृत सक्कर आदि पदार्थ तेज होंगे। इस पक्षमें गुरु वक्रगतिको वद्य १४ को प्राप्त होगा और शनि हर्शल नेपचून यह भी वक्री हैं। जिससे प्रजामें असन्तोष, रोग, पीड़ा, रक्तविकार, अग्निभय आदि होवें। बंगाल, बिहार, उड़ीसा और सिन्धप्रान्तमें आपसी मनोमालिन्य हो। पञ्जाबमें तथा राजपूताना में शीतसे जनता अधिक त्रस्त होगी। पश्चिमी यूरोपमें युद्ध तीव्र घनघोर चलेगा, जिसमें निरपराधी जनता अधिक नष्ट होगी।

माघ शुक्लपक्ष

इस पक्षमें लोहा, सीसा, एल्यूमीनियम, जर्मन सिलवर आदि पदार्थ, चाँदी, सुवर्ण पित्तल, तांबा आदि धातु, गेहूँ घृत, मसूर, उड़द, चणा, बिनौला, तोरिया, सरसों तेल, तिल, विजीटेबलघृत औषधियां अलसी, रुई, अफीम, तेज होवें। गुड़, सक्कर कालीमिर्च, सौंठ, हलदी सम। मूंग, मोंठ, मजीठ में कुछ मन्दी। व्यापारियोंकी स्थिति इस पक्षमें डावांडोल होगी। पश्चिमी भारत और पूर्व भारतमें कहीं वृष्टि होगी। पश्चमीको वर्षा और उत्तरका पवन चले तो आगामी भाद्रपदमें अनावृष्टि और अनाज काफी तेज होगा।

फाल्गुन कृष्णपक्ष

इस पक्षमें रुई, चांदीमें घटाबढ़ी अधिक होगी। व्यापारी सावधानीसे व्यापार करें। गेहूं, अलसी मूंग, चना, सोना, बिनौला, मजीठ, सरसों, तोरिया रुई, चांदी, नमक, सक्कर, गुड़ तेज होवें। चावल, ज्वार, बाजरा, जौ सम। घृत, तेल, लोहा, सीसा कुछ मन्दा होकर फिर तेज होवे। घटाबढ़ी अधिक होवे। इस पक्षमें राजकीय आन्दोलन अधिक होवे। कौंसिलोंमें तथा मन्त्रीपदोंमें परिवर्तन होंगे। कृष्ण १४ को महाशिवरात्रि व्रत है। पूर्व दिन एक काल भोजन कर शिवरात्रिको उपवास करें, सायंकाल को कालेतिल अङ्गमें लगाकर स्नान करें, भस्म और रुद्राक्ष धारण कर शिवालयमें जाकर सायंकाल को शिवजीका पूजन करें। ऐसे चार प्रहर पूजन रुद्राभिषेक आदि करके निशीथ कालमें शिवार्चन और रात्रिमें जागरण करनेसे महत्पुण्य और कैलासवास प्राप्त होता है।

फाल्गुन शुक्लपक्ष

इस पक्षमें सुदी १० तक व्यापारिक घटबढ होगी। चांदी, सोना, तांबा, रुई, अलसी, बिनौला, गेहूं, चना, मूंग, उड़द, हलदी, सरसों, मजीठ तोरियाका भाव मन्दा होगा। सक्कर, गुड़, घृत, तेल, तिल, अफीम आदिका भाव दशमी तक बढ़ कर आगे मन्दा होगा। तांबा, पित्तल, सीसा, एल्यूमीनियमके भाव दशमी तक तेज रहकर फिर मन्दे होंगे। शेअरमें घटाबढ़ी हो। होलिकादहनः— हुताशनी (होली) सोमवारको है, उस रोज सायंकाल को होलिकापूजन करें और इस मन्त्रसे प्रार्थना करें। "अस्माभिर्भयसन्त्रस्तैः कृता त्वं होलिके यतः। अतस्त्वां पूजयिष्यामि भूते भूति प्रदा भव॥" इस मंत्रसे आवाहन प्रार्थना आदि कर षोडशोपचार पूजन करे, बाद अग्नि लगावें और प्रदक्षिणा कर हास्य विनोद आदि करे और ईश्वर भजन स्तुतिपूर्वक रात्रिमें जागरण करे। तथा दूसरे दिन स्नान कर भस्मीको वंदन करें। भस्म वन्दन करनेका मन्त्र "वन्दितासि सुरेन्द्रेण ब्रह्मणा शङ्करेण च। अतस्त्वां पहिनो देवि! भूते भूतिप्रदा भव।"

प्र० चैत्र कृष्णपक्ष

इस पक्षके बैठते ही चांदी, रुई, सोना, तांबा, पित्तल आदि धातु पदार्थोंमें आन्दोलन होना आरम्भ होगा, तेजी आ कर फिर कुछ मन्दी होगी और ति० ११ से फिर तेजीका आरम्भ होगा, यह तेजी टिकेगी नहीं, अमावसके लगभग कुछ मन्दी होगी। चावल शक्कर घृत मूंग मोठ चना यह तेज होंगे। गेहूँ रूई कपास सूत रेशम औषधि तोरिया यह मन्दीकी झलक देकर तेज होंगे।

प्रथमचैत्र शुक्लपक्ष

धातुमात्रमें तेजी-मन्दी काफी होगी। रुईके भावमें तेजी आरम्भ हो कर पक्षान्तमें मंदीका टोन बन जायेगा। लोहा, डामर, इस्पात, रबड़ के भावमें तेजी होगी। गेहूँ, बाजरा, घृत भाव भी तेज होंगे। वस्त्रमें तेजी होगी। प्रसूता स्त्रियोंमें रोग अधिक हो।

द्वि० चैत्र कृष्ण और शुक्लपक्ष

इस वर्ष चैत्र और श्रावण मासमें पाँच गुरुवार-का योग बना है, यह घोर दुर्भिक्षकारक छत्रभङ्ग करनेवाला योग है। वर्षके आरम्भमें ही कई जगह घोर दुर्भिक्षके चिन्ह भारतमें दिखाई देंगे। विशेषतः बंगाल, बिहार, मद्रास, गुजरात इन देशोंमें दुर्भिक्षका प्रभाव अधिक रहेगा। प्रत्येक धान्य तेज होगा। रुई, चांदी, सोना, कपूर, चावल, कथीर, ज्वार, मका मोठ, गेहूँ, उड़द, चनाका भाव तेज अलसी बिनौलामें मन्दी होगी।

इसी अर्थस्तम्भका तेजीमन्दी विषयक दूसरा लेख "त्रैमासिक व्यापार भविष्य" पृष्ठ ४६ पर देखिये।

दीर्घजीवी बननेका उपाय

[लेखक—महामहोपदेशक श्री पं० ज्येष्ठाराम जी शास्त्री शुद्धाद्वैतभूषण]

परात्पर परब्रह्म आनन्दकन्द श्यामसुन्दर श्री कृष्णचन्द्र स्वयं आज्ञा करते हैं कि—ब्राह्मण मेरा मुख है। वास्तवमें ब्राह्मण श्रीभगवान्का मुख ही है, इन्होंने धर्मसञ्चारमें, विद्याप्रचारमें, नये आविष्कारमें, सुनीतिके विस्तारमें और परोपकारमें आत्म-विसर्जन किया है। ब्राह्मण संसारके गुरु, धर्माचार्य, न्यायाधीश, नियम बनानेवाले और संसारके कर्त्ता-धर्त्ता एवं विधाता हैं। ब्राह्मणोंने यह गौरव, इतनी प्रतिष्ठा, हंसी खेलमें नहीं पाया है, उन्होंने संसारके परम पूजनीय बननेसे पूर्व अपने सर्व सुखोंको तिलाञ्जलि दी है। संसारका सब ऐश्वर्य भोग—तुच्छ समझ कर उन्होंने परोपकारके लिए आत्म-विसर्जन किया है। पूज्य महर्षि दधीचि जिन्होंने देव-दैत्य संग्राममें देवोंकी सहायताके लिए और वृत्रासुरके वधके लिए देहत्याग करके अपनी हड्डियाँ दे दी थी, उन्हीं हड्डियोंसे विश्वकर्माने वज्र निर्माण करके जब इन्द्रदेवको दिया था तब इन्द्रने वृत्रासुरका विनाश किया था। ब्राह्मणोंने परोपकार के लिए ही शास्त्रोंकी रचना की है। और अपने सुखको लात मार कर, गृहवासीके बदले वनवासी बनकर कन्द-मूल फलोंसे अपनी क्षुधा निवृत्ति करते हुए कठिन तप करके स्वयं उज्ज्वल बने हैं। इतना ही नहीं किन्तु हिन्दू जातिका मुख उज्ज्वल किया है। इन्होंने हिन्दुत्वकी रक्षाके लिए अत्याचारी बौद्ध और दुर्दान्त यवनोंके समयमें प्राण की बाजी खेली है, और अपने रक्तसे धरती लाल कर दी है, तथा शिर कटा देने पर भी धर्म नष्ट नहीं होने दिया है। उन्होंने कल्पों तक परोपकारके लिए ही प्राण धारण करके अपना जीवन रक्खा है। देखिये महर्षि लोमश मुनि जिनका एक कल्प व्यतीत होने पर एक लोम मात्र ही नष्ट होता था, वैसे दीर्घ जीवी ब्राह्मण प्राचीन समय में थे। पूर्व समयमें जब ब्राह्मण इतने दीर्घायुः थे; तब आधुनिक ब्राह्मण मृत्युके भोग क्यों बनते हैं? इसका प्रत्युत्तर स्पष्ट यही है कि—

अनभ्यासेन वेदानामाचारस्य च वर्ज्जनात्।
आलस्यादन्नदोषाच्च मृत्युर्विप्राञ्जिघांसति॥

वेदोंका अध्ययन त्याग करनेसे, सदाचारका त्याग करनेसे, आलसी प्रमादी बननेसे और अन्न-दोषसे ब्राह्मणोंको मृत्यु नष्टकर देती है। आधुनिक ब्राह्मणोंमें वेदोंका अध्ययन नष्टप्राय हो रहा है और "स्वाध्यायोऽध्येतव्यः" इस श्रुतिका उल्लङ्घन करनेसे एवं "आचारः प्रथमोधर्मः" आचार ही मुख्य धर्म है, इस मनुवाक्यको तिलाञ्जलि देकर पशुओंके जैसे जहाँ खानेका देखते हैं वहाँ ही अपना मुख लगा देते हैं, उपहारगृह (होटल) प्रभृति में खाने-पीनेके लिए प्रवेश करते हैं। इस प्रकार से सदाचार रूपधर्मका त्याग करनेसे, प्रमादी बन जानेसे, और शूद्र-अतिशूद्रका अन्न खानेसे ही मृत्यु ब्राह्मणोंका नाश करती है।

यदि ब्राह्मण मृत्युके मुखसे बचकर दीर्घजीवी बनना चाहते हैं और भारतोद्धार करनेकी इच्छा रखते हों तो, उन्हें अपने पूर्वजोंका गौरव फिर से प्राप्त करना चाहिये। जिस समयमें कौरव और पाण्डवोंका युद्ध करनेका निश्चय हुआ था, उस समयमें अर्जुनने भगवान् श्रीकृष्णसे कहा था कि, महाराज! और किसीका मुझे भय नहीं है, किन्तु—

मुखाग्रे यस्य वै वेदाः कराग्रे सशरंधनुः।
उभयोर्द्रोणसामर्थ्यं शापादपि शरादपि॥

जिनके मुखमें चारों वेद विद्यमान हैं और हस्तमें बाण चढ़ाया हुआ धनुष विद्यमान है, वे द्रोणगुरु मुखसे शाप देनेमें और हाथोंसे बाण चलानेमें भी समर्थ हैं। उन द्रोणगुरुका ही मुझे भय है।

इससे विदित होता है कि पूर्वकालके ब्राह्मणोंमें कितना सामर्थ्य था। और भी—

धर्मशास्त्ररथारूढा वेदखड्गधरा द्विजाः।
विद्याकलातपः सैन्याः भारतोद्धरणे क्षमाः॥

जो ब्राह्मण धर्मशास्त्ररूपी रथमें आरूढ़ हुए हैं, वेदरूपी खड्ग जिन्होंने धारण किया है, और विद्या कला-तप रूपी सैना जिनके पास है, वे ब्राह्मण ही भारतवर्षका उद्धार करनेमें समर्थ हो सकते हैं।

यदि ब्राह्मण अपना गौरव पुनः प्राप्त करके भारतोद्धार करना चाहें तो उनको वेदोंका स्वाध्याय, और धर्मशास्त्रका पठन-पाठन, विद्याभ्यास, कला-कौशल, तप प्रभृतिको पुनः प्राप्त करना चाहिए, और सन्ध्यादि षट्कर्मपरायण बनकर दीर्घजीवी बनना चाहिये।

दीर्घजीवी बननेका उपाय—

प्रत्येक मनुष्य ६० घड़ीमें याने २४ घण्टों में २१६०० श्वास लेता है, इस गणनासे प्रत्येकके कर्मानुसार किसीमें दस करोड़, किसीमें करोड़, किसीमें पांच लाख, किसीमें लाख, इस प्रकारसे श्वास दिये हैं। श्वासकी स्वाभाविक गति यह है कि—बैठनेकी दशामें श्वास शरीरके बाहर नासिकासे १२ अंगुल लम्बाई पर्यन्त जाता है, मार्ग चलनेमें १८, सोते समय ३६, क्रोधित होने पर ६७ और मैथुनके समय १०७ अंगुल लम्बाई पर्यन्त जाता है। अर्थात् भिन्न-भिन्न प्रमाणोंसे श्वासोंका व्यय होता है, अतएव जिस दशामें अधिक व्यय हो उस अवसरको जितना टाला जायगा उतनी ही आयुकी वृद्धि होगी।

अब प्रत्येक मनुष्यको विचार करना चाहिए कि—परम दयालु परमेश्वरने प्रतिदिनके २१६०० श्वासोंके अनुपातसे १०० वर्षकी आयु हमें दी है, किन्तु हमने उसको सावधानीसे व्यय न करके यथेष्ट लुटा दिया, तो फिर इसमें परमेश्वरका क्या दोष है?

जैसे किसी धनीके पुत्रको उसका पिता एक लाख रुपयेकी सम्पत्ति छोड़ गया हो और उस पुत्रको यदि नवीन धनोत्पादन करनेकी बुद्धि या शक्ति न हो तो उस धनका व्यय उसको बहुत सोच समझकर करना चाहिए, यदि ऐसा न करके वह उद्धतपनेसे यथेष्ट व्यय करेगा, तो थोड़े दिनोंमें उसका ऐश्वर्य नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा, और उसको भीख मांगनेका समय आ जायगा। यदि वह समझ-सोचकर हाथ रोककर खर्च करेगा, तो वह धन उसको बहुत दिनों तक पर्याप्त रहेगा।

इसी प्रकार परम दयालु परमेश्वरके दिये हुए श्वासोंको जितनी कमीके साथ अपने व्ययमें लाया जायगा, उतनी ही अपनी आयुकी वृद्धि होगी, अर्थात् प्रतिदिनके २१६०० श्वासोंमेंसे यदि कुछ कम श्वास व्यय होंगे तो उनके इकट्ठे होनेसे हमारी आयु सौ वर्ष से अधिक बढ़ जायगी। यदि कोई कहेगा कि श्वासोंका थोड़ा उपयोग या व्यय कैसे किया जाय? तो इसका प्रत्युत्तर यह है कि—"प्राणायाम ही सर्वोत्तम उपाय है" और उस प्राणायामको सीखनेकी आवश्यकता हमारे पूर्व महर्षियोंने सन्ध्यामें रखी है। अतएव त्रिकाल सन्ध्या ही आयु बढ़ाने का एक मुख्य साधन है, यह बात सिद्ध होती है।

अब कितने समय तक प्राणायाम करनेसे कितनी आयु बढ़ती है इसका विचार करने पर ज्ञात होता है कि—जिसको २४ घण्टे तक अर्थात् आज सूर्योदयसे कल सूर्योदयके समय तक अपने प्राणोंको रोकना आता है उस परिपक्व अभ्यास वाले योगीकी एक दिन की आयु ६० वर्ष पर्यन्त बढ़ेगी, इससे आधी अर्थात् जिसकी शक्ति १२ घण्टे प्राणायाम करनेकी है, उसकी एक दिनकी आयु ३० वर्ष तक बढ़ेगी। जिसकी शक्ति एक घण्टा प्राणायाम करनेकी है, उसकी एक दिन की आयु २॥ ढाई वर्ष, और एक

मिनिट प्राणायाम करने वालेकी एक दिन की आयु पन्द्रह दिन पर्यन्त बढ़ेगी। छोटा बालक भी ३० सेकिण्ड पर्यन्त अपने प्राणोंको सुखपूर्वक रोक सकता है, बड़े मनुष्यको तो एक मिनिटका प्राणायाम करने में कुछ अड़चन नहीं पड़ती, क्योंकि वह सुसाध्य है। फिर उसको अभ्यास करके प्राणायाम करनेकी शक्ति बढ़ा लेनी चाहिए। श्रद्धा और दृढ़तासे अभ्यास बढ़ सकता है। प्राणायाम करनेकी रीति किसी उत्तम गुरु से प्रथम सीख लेनी चाहिए, और पीछे नित्य प्राणायाम करनेकी अपनी शक्ति बढ़ा लेनी चाहिए।

पूर्वकालमें लोमश, मार्कण्डेय, प्रभृति महर्षि लोग इस रीतिसे अपनी आयुको बढ़ाकर सहस्रों वर्षों तक जीवित रहते थे, परन्तु आज कल यह रीति नष्ट होने से सन्ध्या कैसे करनी चाहिए ? और प्राणायाम क्या वस्तु है ? इन सब बातोंको हम भूल गये हैं। इस कारण हमारी आयुकी रात-दिन हानि होती रहती है। संसार व्यवहारमें दौड़धूप परिश्रम करनेसे अनेकों कष्ट और विषय भोगोंकी लालसामें जो श्वासोंका अधिक व्यय होता है उसकी पूर्ति करनेके लिए सन्ध्या ही मुख्य साधन है। अर्थात् दिनमें व्यावहारिक विषयों की सिद्धिके लिए जो कष्ट उठाना पड़ता है उनमें व्यय होने वाले श्वासोंकी पूर्तिके लिए अपने पूर्वज महर्षियों ने सायं-सन्ध्या, और रात्रिमें निद्रा-विषय सुख प्रभृति में व्यय होने वाले श्वासोंकी पूर्तिके लिये प्रातः सन्ध्याकी योजना बड़ी दीर्घदृष्टिसे की है।

जगद्गुरु परात्पर परब्रह्म आनन्दकन्द श्यामसुन्दर श्रीकृष्णचन्द्र गीतामें आज्ञा करते हैं कि— "तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ" अतएव भगवदाज्ञानुसार शास्त्र प्रमाण मानकर सत्य बोलना, धर्माचरण करना, स्वाध्याय, त्रिकालसन्ध्यादि षट्कर्म-परायण रहना, प्रभृति नियमोंका पालन करनेसे मनुष्य अवश्य दीर्घजीवि बन सकता है। उपर्युक्त ब्राह्मणशब्द द्विजातिका उपलक्षण है, अतएव द्विजाति इसी प्रकार से सन्ध्यादिकमें प्राणायाम करनेसे, और शूद्रादिक स्वधर्म पालन करनेसे अपनी आयु बढ़ा सकते हैं। परमात्मा सबको सद्बुद्धि प्रदान करें और सर्व वर्ण अपने अपने वर्णाश्रमानुसार स्वधर्मका पालन करके अपनी आयु बढ़ाकर दीर्घजीवी बनें यही श्यामसुन्दर आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्रके चरण कमलोंमें प्रार्थना करता हूँ।

सन्तान-निग्रह

[लेखक—कविराज श्री० पं० चिरञ्जीव शर्मा जी वैद्य तर्कालङ्कार]

समय बड़ा विचित्र है। हम उज्ज्वल भविष्यकी ओर जानेकी आशामें हैं। परन्तु शैतान भी सुमधुर मुस्कराहटोंसे हमें पथ-भ्रष्ट करनेमें उद्यत है। ब्रह्मचर्यके महत्त्वका आदर करनेवाली इस संयम-शील तपोभूमिमें शैतान कह रहा है—"विषयोप-भोग मनुष्यका जन्म सिद्ध अधिकार है, अनिवार्य आवश्यकता है। सन्तान अधिक होनेके भयको दूर रखो। मेरे पास इसके अनेकों कृत्रिम साधन हैं। उनके होते हुए संयम आदि की कुछ अपेक्षा नहीं।"

परन्तु इसके विपरीत भारतीय उच्च सभ्यतामें पोषित महान् आत्माका दैवी सन्देश यह है कि—"आत्म-संयम ही सन्तान-निग्रहका एकमात्र उपाय है।"

शैतानका बताया उपाय हमें पतित उच्छृङ्खल बनाता है। जब कि दैवी सन्देश हमें मनुष्योचित कर्त्तव्यकी ओर बढ़ा कर मनुष्यसे देव बनाता है।

गर्भ-स्थिति—

प्रारब्धके अनुसार, शुक्रकीट तथा डिंबकीटके योगसे गर्भ-स्थिति होती है। भगवान् चरकके दार्श-निक शब्दों में—

शुक्रास्रगात्माशयकालसम्पत्, यस्योपचाराश्च हितैस्तथा च।
गर्भश्च काले च सुखी सुखं च, संजायते संपरिपूर्णदेहः ॥"

भाष्यकारके शब्दोंमें—

अधिकरणसाधना लोके स्त्री स्थापयत्यस्यां गर्भं इति।
कर्त्तृसाधनश्च पुमान्, सूते पुमान् इति ॥

सन्तान-निग्रहका अर्थ है स्त्रीके शुद्ध आर्त्तव अर्थात् डिम्बकीट और पुरुषके शुद्ध शुक्र कीटाणुका मेल न होने देना।

इसकी आवश्यकता —

भ्रष्टाचार जार अविवाहित संयमहीन-व्यक्ति कुकर्मके फलसे बचनेके लिए इसे चाहते हैं।

विवाहित इसे इसलिये चाहते हैं कि—विषयोप-भोग के लिये लगाम ढीली छोड़ कर भी मजे लूटते रहें; सन्तानके प्रति कर्त्तव्यसे भी दूर रहें; अथवा सन्तानके बोझसे भी बचे रहें।

हम इस प्रकरणमें विवाहितोंके लिए सन्तान-निग्रहके सम्बन्धमें सोचेंगे। यतः आसुरी प्रकृतिके सामाजिक नियमोंकी अवहेलना करने वाले उच्छृङ्खल व्यक्तियोंके लिए तो "दुर्जनं दूरतो वन्दे" की उक्ति-से उनके सम्बन्धमें सोचना उपयोगी नहीं होगा।

विवाहित व्यक्तिके समक्ष विवाहका उद्देश्य महान् है और महत्तम हो सकता है। वंश-रक्षा पूर्वक आत्म-संयम करते हुए उसे महान्की ओर जाना है। प्रकरण प्राप्त निम्न वाक्य और वाक्यांश द्रष्टव्य हैं—

"पित्र्यधर्म्मार्थकामाः प्रजाः प्राप्स्यसीति।"

लोके व्यवायामिषमद्यसेवा नित्यास्तु जन्तोर्नहि तत्र चोदना।
व्यवस्थितिस्तेषु विवाहयज्ञ-सुराग्रहैराशु निवृत्तिरिष्टा ॥
—(श्रीमद्भागवते ११ पञ्चमाध्याये ११ श्लोकः।)

इस महान् उद्देश्यको देखते हुए आत्म-संयमके अतिरिक्त सन्तान-निग्रहका कोई दूसरा साधन नहीं बन सकता। कुछ लोगोंका अनुभव है कि "दाम्पत्य-जीवनमें आत्मसंयम करना कठिन है।" किन्तु किसी बातकी कठिनता उसकी अनुपयोगिता और अशक्यताको तो सिद्ध नहीं कर सकती। समुद्र तलमें गोता लगाना कठिन होनेके कारण से ही अशक्य और अनुपयोगी नहीं हो जाता। यद्यपि

कठिनता अर्थात् असंयमशीलता धीरे-धीरे टलेगी परन्तु तो भी, जितना भी हम संयम कर सकेंगे, उससे हम अभ्यस्त बनेंगे, और क्रमिक उन्नति कर सकेंगे।

जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पैठ।"
"अभ्यासेन तु कौन्तेय! वैराग्येण च गृह्यते।"
"स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।"

प्रेममें बाधा नहीं है—

आजकी चकाचौंधपूर्ण आसुरी सभ्यतामें पले कई व्यक्तियोंका विचार है कि — आत्म-संयमके रहते, बिना आत्मपात किये, वीर्यरक्षाके कारण, दाम्पत्य जीवनमें प्रेमके अभावसे कलह बना रहेगा और तलाक प्रथा Divorce चलेगी। किन्तु ऐसा प्रेम स्वार्थ है, विशुद्ध प्रेम नहीं, मोह है। यह तो किसी भी समय दूर स्थितिमें, रोग आदिकी दशामें स्वार्थके पूर्ण न होने पर नष्ट हो सकेगा। प्रायः असंयमी व्यक्तियोंमें तलाक प्रथा है। जिन देशों और समाजोंमें प्रणय-परिचयकी प्रथा है उनमें प्रायः तलाक प्रथा Divorce का बाहुल्य है। धर्म संकटके नाम पर भी आत्म-संयम हेय नहीं है।

मान लीजिये, दम्पतिमेंसे एक व्यक्ति ब्रह्मचर्य रखना चाहता है; और दूसरा कामोन्मादसे विह्वल है, तब ब्रह्मचारी क्या करे ? इसका अविलम्ब उत्तर यही है कि—पतिका पत्नीसे और पत्नीका पतिसे हठात् अपनी कामेच्छा पूर्ति करनेका कोई नैतिक अधिकार नहीं माना जा सकता। परन्तु सभ्य दम्पति परस्पर नम्रतापूर्वक ही एक दूसरेकी भावनाको, अपनी-अपनी उच्चतम भावनाके बल और विश्वास पर, अत्यन्त ऊंचे प्रकारकी शक्ति रूपमें परिणत कर सकेगा। उनमेंसे एक दूसरेको समझना और समझाना होगा कि—पति-पत्नीके बीच सच-मुचमें कैसा सम्बन्ध होना चाहिए। और विवाहका परिमार्जित पवित्र अर्थ भी समझना होगा। यदि एकका संयम सत्य होगा, तो दूसरेको अपने अनुकूल करनेमें विलम्ब न लगेगा।

केवल सन्तानोत्पादनके डरसे ही प्रेम याचनाका तिरस्कार करना तो कायरता है। तथापि एक लाभ तो है कि — सन्तानोत्पादनसे डरना दोनोंके लिए कामवासना पर नियन्त्रण रखनेमें एक अच्छा कारण बन सकता है। कदाचित् जीवन-संगीकी इच्छाके विरुद्ध भी, उच्च उद्देश्यकी पूर्तिके लिये ब्रह्मचर्य पालन करना पड़े; तो भी वह कर्त्तव्य है। इसका यदि तत्काल एक दूसरे पर अच्छा प्रभाव न भी पड़े तो भी संभोगत्याग रूपी वीरोचित नीतिके पालन द्वारा ही सन्तान-निग्रह विधेय है; न कि कृत्रिम उपायों द्वारा।

कुछ लोगोंका मत है कि—"युवतियोंमें योषापस्मार Hysteria युवाओंमें उन्माद Mania, Melancholia आदि रोग कामवासनाके पूर्ण न होनेसे ही होते हैं।" यद्यपि यह ठीक है। तथापि कामवासनाकी अनियमित जागृति ही क्यों हुई ? सोचना तो इसका निदान है। इसकी ढूंढ करनेसे पता लगेगा कि—हमारा चटकीला-भटकीला और कृत्रिम वेषभूषा, आचार-विचार रहन-सहन, रीति-नीति सब ही ऐसे बन गये हैं—जिनसे कामवासना सदा प्रबुद्ध रहे। अतः अनियंत्रित कामवासना उदय ही न होने पावे इसके लिए हमें सचेत रहनेकी अपेक्षा होनी चाहिये।

हमें श्रृंगार और प्रेमके नाम पर वास्तविक प्रेम और श्रृंगारकी हत्या न करनी चाहिये। यदि प्रेमका अर्थ कोई कामवासनाकी पूर्ति ही समझता है, तो उसे इस मोह और स्वार्थपूर्ण अर्थसे कौन रोक सकता है। कहा भी है—

"कामान्धानां नैव लज्जा भयं वा।"

काम प्रवृत्ति स्वाभाविक नहीं—

यद्यपि यह बात ठीक है कि काम-चेष्टा पर विजयी होना दुर्भर है। जैसा कि कहा भी है—

मत्तेभकुम्भदलने भुवि सन्ति शूराः
केचित् प्रचण्डमृगराजवधेऽपि दक्षाः।

किन्तु ब्रवीमि बलिनः पुरतः प्रसह्य
कन्दर्पदर्पदलने विरला मनुष्याः ॥

तथापि इसकी कठिनता मात्रसे इस पर विजयी होना अनावश्यक, अशक्य एवं असम्भव नहीं है। क्योंकि यह तो मानसिक इच्छा परिवर्तनसे सम्बन्धित कार्य है। यथा हि—

काम ! जानामि ते मूलं इच्छया किल जायसे।
इच्छायां परित्यक्तायां कथं त्वं मयि जायसे॥
बुल्लिया मनदा की समझाउना।
इधरों मोड़ उधर ल्याउना ॥

आजके दुःखान्त नाटकों, उपन्यासों, सिनेमाओं और कहानियों के निर्माताओंने प्रायः प्रेमकी परम पवित्र परिभाषाको इतना विकृत कर दिया है कि, उसके सम्पर्कमें अनियंत्रित कामवासनाकी वृद्धिमें महान् सहयोग प्राप्त हुआ है। भले ही कुछ साहित्यिक कहानीलेखक और चलचित्रनिर्माता इसके अपवाद कहे जा सकते हैं। कला आर्ट अथवा सौन्दर्यके नाम पर हमारी वेषभूषा इतनी कृत्रिम हो गई है जिसकी जीवनोपयोगके लिए आवश्यकता नहीं है। सभ्यता और संस्कृतिके नाम पर ही हमारा रहन-सहन, आचार-विचार, सभ्यता और संस्कृति इतने दूर भाग रहे हैं, जितना कि आकाशसे पाताल। कामवासना पर विजयी होनेके लिए हमें मूलतः सुधार करना होगा। हमारे पूर्वजन्मके कुसंस्कारों और माता-पिताके विलासप्रिय-विचारों तथा लुभावने चटकीले-भटकीले रहन-सहन, वेषभूषा, कुशिक्षा दीक्षाका ही दुष्परिणाम है कि हम पाशविक वृत्तिकी ओर बढ़ रहे हैं।

"मननात् मनुष्यः" के महान् अर्थको हम भूल चुके हैं।

अतः अभिप्राय यही है कि कदाचित् संतान–निग्रहका होना विधेय भी माना जाय, तो भी उसका सभ्यतापूर्ण और मनुष्योचित उपाय जिसे दैवी उपाय कहा जा सकता है, वह है —

"आत्मसंयम द्वारा काम-वासना पर विजयी होना।" जो लोग आसुरी उपायोंसे सन्तान निग्रह पर विश्वास रखे हुए हैं, उन्हें तो अवश्य ही कृत्रिम उपायोंका आश्रय लेना पड़ेगा। कोई ऐसा साधन ढूंढ़ना ही होगा कि जिससे शुक्र कीट Sperm का डिंब Matureovum से सम्बन्ध न हो सके। उसके लिए शस्त्र-क्रिया स्निग्ध-द्रव्य-प्रयोग, कुनीन, हिंगु विडङ्ग पिप्पली आदि एवंविध अन्यान्य सहायकोंकी शरण ढूंढनी ही पड़ेगी। अथवा सन्तान-निग्रहके लोलुप व्यक्ति भ्रूण-पात भी कर बैठें तो असम्भव नहीं।

क्या इसे प्रकृतिका महान् कोप न कहें कि — सन्तान-निवृत्तिके साधनोंके न जानते हुए भी, सन्तान निग्रहके साधनोंकी न्यूनताके रहते भी जब व्यभिचार की मात्रा बढ़ रही है, तब सन्तान–निग्रहके विज्ञापनों द्वारा क्या आशा की जा सकती है कि, इस विज्ञापन-कलासे दुराचारकी मात्रामें पुनः वृद्धि नहीं होगी।

आजकल भले ही कोई व्यक्ति, देशकी निर्धनता, स्त्रीके स्वास्थ्य तथा प्रेमके नाम पर कृत्रिम उपायोंके पक्षमें हो। किन्तु सन्तान-निग्रहका अर्थ भ्रूणपातसे कम नहीं है। भले ही यह महान् अर्थ हमारी मोह पूर्ण अशुद्ध भावनाके समक्ष उचित न भी प्रतीत होवे। आयुर्वेदके महान् ऋषियोंने योनि-रोगोंके सम्बन्धमें लिखा है कि —

पञ्चधा पित्तदोषेण तत्रादौ लोहितक्षरा।
प्रस्रंसिनी वामिनी च पुत्रघ्नी पित्तला तथा॥

आज कोई सभ्यताके नाम पर ही अपत्य-नाशक रोगको खरीदना चाहे तो उसे कौन रोक सकता है?

आत्म-संयमकी महानता—

आत्म-संयम द्वारा सन्तति-निग्रहमें मन पतित न होगा। मनःशुद्धि और मनोविकास हीके द्वारा मनुष्य अपने परमोद्देश्यकी ओर बढ़ सकता है। अतः आत्मसंयम ही परम-विधेय और आवश्यक है। जो लोग रत्यर्थका क्षुद्रतम अर्थ वीर्यनाश समझते हैं यह उनका भ्रान्त स्वार्थपूर्ण पक्ष है। उन्हें "रतिपुत्रार्थ-दाराः" के "पुत्रार्थ" शब्दके महत्त्वकी

ओर देखना चाहिये। पुं नाम नरकका त्राता पुत्र उसी दशामें हो सकेगा जबकि पुत्रोत्पादन नारकीय भावनाओंसे रहित शुद्ध-प्रेम-वश हो कर किया जावेगा। कृत्रिम ढङ्गसे सन्तान-निग्रहके पक्षपातीका भाव पवित्र नहीं हो सकता, जितना कि आत्म-संयम के पालनकर्त्ताका भाव परम पवित्र माना जा सकता है। पुरुषार्थी पुरुष अधिक सन्तानका भी पोषण कर सकता है। आलसीके लिये तो अपना आप भी भार ही होता है। आर्यशास्त्रोंके अनुसार २५ वर्षके पश्चात् ५० वर्ष तक गृहस्थ धर्ममें रहना चाहिये, "स्वदारनिरतः सदा" । परस्त्रीगमनका तो विवाह-संस्कारमें स्थान ही नहीं रहता। प्रत्येक व्यक्ति और गृहस्थीके लिये भी आत्मसंयम ही विधेय है। "ऋतुकालाभिगामी स्यात्"का अभिप्राय यही है कि यदि काम वासना पूर्तिकी भावना हो तो वह सन्तानोत्पादनार्थ ही हो और वह भी ऋतुकालके अतिरिक्त समयमें चरितार्थ नहीं हो। परन्तु ऋतुकालाभिगमन अत्यावश्यक और विधेय नहीं है। नियम है कि—

"परिसंख्यायाः अन्यनिवृत्तौ तात्पर्येण,
आवश्यकत्वे तात्पर्याऽभावात् ।"

निम्नोक्त वाक्य प्रकरण संगत रहेंगे —

यथा "पञ्चपञ्चनखा भक्ष्या" इति।

तथा रागतो नित्यवत् प्राप्तस्य व्यवायादेः, विवाहादि-नियमेन अभ्यनुज्ञा द्वारा परिसंख्यैवेति। ननु यदि अभ्यनुज्ञा-मात्रमेतद् भवेत् तर्हि, 'ऋतुस्नातां तु यो भार्यां सन्निधौ नोपगच्छति। घोरायां भ्रूणहत्यायां पच्यते नात्र संशयः ॥', इत्यादि दोष श्रवणं न स्यात्, नैष दोषः, मनसिकामे सत्यपि तस्यां अरुच्या द्वेषादिना वा ताम् (स्त्रियं) अनुपगच्छतो दोषश्रवणोपपत्तेः इति सर्वमनवद्यम्। अव्यवस्थया सर्वत्र रागतः प्राप्तं व्यवायादिकं तस्य विवाह-यज्ञ-सुराग्रहैर्व्यवस्था क्रियते। उपसंहारनामा संकोचः क्रियते इत्यर्थः। तस्मात् विधेरभावात् मूलभूतप्रापकरागस्य दुर्बलत्वात् विचारेण अपनोद्यत्वाच्च विरागिणां निवृत्तिरेव इष्टा न प्रवृत्तिः।

अतएव पहिले कहा है —

लोके व्यवायामिषमद्यसेवा नित्यास्तु जन्तोर्नहि तत्र चोदना।
व्यवस्थितिस्तेषु विवाहयज्ञसुराग्रहैरासु निवृत्तिरिष्टा ॥

अतः हमारा सिद्धान्त यही है कि— आत्मसंयम ही सन्ताननिग्रहका एक मात्र उपाय माना जा सकता है। यदि सन्तान-निग्रहकी आवश्यकता हो तो यह कठिन होने पर भी असम्भव नहीं है। आजीवन ब्रह्मचारी रहने वाले दम्पतियोंके नाम मिल सकते हैं। आत्मसंयमके पालनसे किसी भान्तिका भी धर्मसङ्कट उपस्थित नहीं होता। नैतिक और सामाजिक बल भी अध्यात्म बल-पूर्ण आत्मसंयममें समाविष्ट है। प्रथम बालककी पुष्टिपर्यन्त संयम रखने से पारिगर्भिक बालशोष कूकूणक आदि रोग बच्चोंको न हो सकेंगे।

यदि कामपूर्त्तिके लिये स्वतंत्रता मान ली जाय तो वैसे लोगोंकी सन्तान कदाचित् हो जाय तो भीरू कायर स्वार्थ और दास-वृत्ति-प्रधान होगी। भले ही कोई व्यक्ति कृत्रिम साधनोंसे सन्तान-निग्रह का पक्षपाती हो, परन्तु जब भी आवश्यकता पर सन्तानोत्पत्ति चाहेगा तो, उसके वीर्यमें हीन-शक्ति होनेके कारण, सन्तान भी हीन वीर्य उत्पन्न होगी। अनेकों तर्कों और युक्तियोंके सन्तान-निग्रह अर्थ कदाचित् समुपस्थित होने पर भी कृत्रिम उपायोंसे सन्ताननिग्रहको कथमपि विधेय श्रेणीमें रखा नहीं जा सकता। क्योंकि वैसी स्थितिमें मनकी अपवित्रता और वीर्यनाश तो होता ही रहेगा। मनोयोग पूर्वक इस पर विचार करें तो पता चलेगा कि — अनेकों तर्कों युक्तियोंके रहते भी तर्ककी अप्रतिष्ठा होने पर, यही सिद्ध होगा कि — "कृत्रिम उपायोंसे सन्तान-निग्रह करना अनैतिक है" महान् पुरुषोंकी तर्कके नीचे जीवनकी जो उच्च भावना, मनुष्यकी जो महती परिभाषा अन्तर्हित है, उसके समक्ष कृत्रिम साधनोंके लिये कोई स्थान ही शेष नहीं रहता। बाल-वृद्ध-बहु-विवाह आदि कुप्रथाओंसे बच कर, आत्म-संयमी तथा नियमशील जीवनको रखते हुए हमें इस आदर्शको समझना होगा कि —

"ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् ।"
"ऋतुकालाभिगामी स्यात् ।"

"ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।"

"पित्र्यधर्म्यार्थकामाः प्रजाः प्राप्स्यसीति।"

कुछ लोगोंका तर्क हो जाता है कि — ब्रह्मचर्यसे सृष्टिका लय हो जावेगा। परन्तु महान् यशस्वी विश्ववन्द्य महात्मा गान्धीके शब्दोंमें —

"ब्रह्मचर्यके पालन करनेके प्रयत्नसे जितना शीघ्र सृष्टिका लय होगा, उससे कहीं अधिक शीघ्रतासे सन्ताननिग्रहके उपाय पृथ्वीको मनुष्योंके भारसे रहित कर देंगे।"

आत्म-संयम द्वारा सन्तान-निरोध वीर्यरक्षाका हेतु होने से, अवसर आने पर ऐसे संयमीकी सन्तान तेजस्वी होगी। और ऐसा महान् व्यक्ति देश और जातिके कल्याणका हेतु होगा।

कृत्रिम साधनोंसे सन्तान-निग्रहमें, वीर्यरक्षाका अभाव तो रहेगा ही, मन भी दूषित रहेगा। तथा ऐसे व्यक्तिकी सन्तानोत्पादन शक्ति भी नष्ट हो जायेगी, अतः कदाचित् दुर्भाग्यवश सन्तान आदिके नाश हो जाने पर पुनः सन्तान उत्पादनकी इच्छा होगी तो ऐसे व्यक्तिको पछताना पड़ेगा। कदाचित् सन्तान उत्पादनकी शक्ति ऐसे व्यक्तिमें शेष हो अथवा लाई जा सके तो भी आवश्यकता वश जो सन्तान होगी वह अल्पायुः, दीन विचार, कामुक, भीरु और महान् कायर होगी तथा ऐसा व्यक्ति सर्वदा हीन और दीन विचारोंसे पूर्ण और परम स्वार्थी होगा। सन्तान-निग्रह उसी दशामें स्त्रीके स्वास्थ्य और सौन्दर्यका रक्षक है, यदि निग्रहका साधन आत्मसंयम हो।

पुरुषके स्वास्थ्य और सौन्दर्य, विशेषकर मानसिक स्वास्थ्य और सौन्दर्य एवं विशाल हृदयता और उन्नत विचारोंका रक्षक भी "आत्म संयम" ही है। क्या प्रदर, प्रमेह, बहुमूत्र, प्रभृति रोगोंसे आक्रान्त, गार्डनोंकी इन साड़ी पैण्ट-भूषित तितलियों और भौरोंका स्वास्थ्य और सौन्दर्य हीन दीन स्वार्थ पूर्ण कामुक चरित्र हीन विचार, आपके देश और जातिके गौरवका कारण बन सकते हैं? यदि आप 'हाँ' कहते हैं, तो ऐसी महा विद्वन्मण्डलीको दूरसे ही शतशः नमस्कार है।

जिनमें कुछ भी अपने पूर्वजोंका गौरव विद्यमान है उन्हें इस बढ़ रही वीभत्समयी अनियन्त्रित कामवासना मूलक कृत्रिम सन्तान-निग्रहकी बडवानलको शान्त करनेके लिये, प्रायः पश्चिमीय ढङ्गके, एवं कदाचित् प्राचीन ढंगके भी दूषित साहित्य तथा दूषित भावनापूर्ण सिनेमाओंका क्रियात्मक बहिष्कार करना होगा और वर्तमान शिक्षा प्रणालीमें सुधारकी अपेक्षा है। राज्य-शासन-पद्धतिमें ऐसे सुधार अपेक्षित हैं, कोई भी व्यक्ति विज्ञापक और प्रकाशक तथा मुद्रकके रूपमें, गर्भ-निरोध गर्भपात आदिका विज्ञापन न कर सके, भले ही कपटपूर्ण शब्दोंमें, कानूनकी शरण लेते हुए उसने लिखा हो —

"देखना इसे गर्भवती न खावे नहीं तो इसकी पहिली मात्रा ही गर्भपात कर देगी।"

अनुशासित सभ्य व्यक्तिकी दृष्टिमें पुरुषार्थी पुरुषके लिये सन्ताननिग्रहकी आवश्यकता नहीं, यदि कदाचित् आवश्यकता मान भी लें तो भी उसके दो ही साधन हैं —

आसुरी और दैवी

आसुरी उपायोंका आश्रय हमें असुर बना देगा। दैवी उपायोंसे हम देव बन सकते हैं।

"यो यद्भावः स एव सः।"

भले ही आप इस वैज्ञानिक और दार्शनिक तथ्यके प्रति अपनी अनभिज्ञता प्रकट करें। अपनी कामुक प्रवृत्तियोंके कारण असम्भव समझें। परन्तु स्त्री पुरुषोंके सम्बन्धमें विशुद्ध प्रेमकी धारा तभी बह सकेगी जब दैवी उपायरूपी गंगाकी शरण ली जायेगी। स्वभावके अनुकूल आसुरी-प्रकृतिके आसुरी उपायको और दैवीप्रकृतिके दैवी उपायको "सन्तान निग्रह" का साधन बनायेंगे। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु।

त्रैमासिक व्यापार भविष्य

[लेखक—श्री पं० डालचन्द्र जगन्नाथ जी व्यास ज्यौतिषी]

माघमासका व्यापार भविष्य

[ता० ३० दिसम्बरसे २८ जनवरी तक]

प्रजामें विग्रह होगा। व्यापारमें परिवर्तन तथा बाजारमें रौलेबाजी होगी। भयङ्कर भविष्यमें भाग्यके भरोसे न रहकर सोच समझकर काम करना चाहिये। वदी १ से १२ दिनमें रुईमें १८, २० टका चावल, घीमें ५, ७ टका गुड़ खांडमें १॥, २ टका मन्दा। अरहर बाजरा गेहूँ जौ चना जस्ता वारदाना मन्दा या सम। अलसी चांदी, सोना सरसों सूत तेज। बाकी वस्तुओंमें घटा बढ़ी। बदी १२ से १० दिनमें घीमें ८, १० टका। तिलमें १॥, २। तेलमें १, १॥ टका, अरहर बाजरेमें ॥।) ॥।=) तेज। उड़द मूंग गेहूँ जौ चना चावल तेज, गुड़ खाँडमें भी २॥, ३ टका तेज। अलसी मूंगफली बिनौलामें घटा बढ़ी रुख तेज। लाख, चपड़ा, बारदाना तांबा पीतल मन्दा। सुदी ७ से ८ दिनमें चांदीमें मन्दा होकर तेज। सोना अलसीका रुख भी तेज रहेगा। रुई सूतमें मन्दा, रुईमें १२, १५ टका सूतमें =)॥, ≡) मन्दा। बारदानेमें २, २॥ टका, जस्तामें ३, ४ टका मन्दा। किराना, कागज, कपूर, कांसा कुछ तेज रहेगा। अरहर बाजरा चनेका रुख कुछ मन्दा होगा। कोई नई घटना उपस्थित होगी।.. व्यापारकी स्थिति डावांडोल रहेगी।

फाल्गुन मासका व्यापार भविष्य

[ता० २६ जनवरीसे २६ फरवरी तक]

शीत अधिक पड़ेगी, फसलमें कुछ हानि होगी। बदी १ से ६ दिनमें गेहूँ, जौ, चना, बाजरा मन्दा। रुई, सूत, बिनौला तेज होकर मन्दा हो। गुड़, खांड, तेल, घी, चांदी तेज। सोना, बारदाना, मूंगफली समभाव। बदी ६ से १० दिनमें रुईमें २०, २२ टका, गेहूंमें ।।) ।।=) चांदीमें २, ३ टका, बारदानेमें ३, ४ टका मन्दा। घीमें ३, ४ तैलमें ।।।) १), गुड़ खांडमें ।।) ।।=), चनामें ।) ।=), लोहामें ।=) ।≡) तेज। बिनौला, मूंगफली, जस्ता, तांबा, पीतलमें घटा बढ़ी। रुख सम। सुदी ४ से १२ दिन रुई, सूत, चांदी, सोना, गुड़, खांडमें मन्दा जंचता है। घी, तैलमें घटाबढ़ी। चना चावल तेज। धान्य भाव मन्दा होगा। लाख, चपड़ा, पाट, कुष्टा, बारदाना, जस्ता, तांबा, पीतलमें मन्देका ही रुख है। खूब सोच समझकर काम करना। प्राय: बाजारमें मन्देका रुख है। रस पदार्थ तेजीके रुख पर रहेंगे।

नोट—इस मासमें सूतमें ।।।) १), चनामें ।।=) ।।।), घीमें ४, ५ टका, तैलमें १) १।) और लोहा, सरसों, बाजरा, गुड़, खांड, चांदी आदि कई वस्तुओं में जोरदार तेजी मन्दी है।

प्रथम चैत्रवदीका व्यापार भविष्य

इस पखवारेमें ज्वर अतिसार रोग होगा। रात्रिमें सर्दी, दिनमें गर्मी अधिक पड़ेगी। बच्चोंमें रक्तविकार व चेचककी बीमारी फैलेगी। बदी १ से ७ दिनमें रुईमें ८, १० टका, गेहूँ चनामें ।) ।=) चांदीमें १) १।) सूतमें =)॥, ≡) मन्दा। बाकी वस्तुओंमें घटा बढ़ी होगी। अरहरमें =) =)॥ तेजीका रुख है। बदी ७ से ८ दिनमें रुईमें ५, ७ टकाकी तेजी होकर १२, १५ टका मन्दी। सूत, गेहूं, चना, चांदी समभाव। गुड़में ।।।) १), खांडमें १॥, २ टका घीमें भी २, ३ टका मन्दा। चांदीमें १) १।), सोनेमें २) २।।) टका तेज। पाट, कुष्टा, जस्ता, लोहा, तांबा, पीतल तेज। अलसी, लोहा, सरसों, मूंगफली बारदानेमें घटा बढ़ी। रुख कुछ मन्दा होगा। बाजरा अरहरमें काफी मन्दा। अमावस्याके लगभग धान्यभाव कुछ तेज होगा। सावधानीसे सोच समझकर काम करना।

ऐतिहासिक नाटक—

मिहिरकुल

[लेखक—डा० श्री कैलाशनाथ जी भटनागर एम० ए०, पी-एच० डी०]

[गतांकसे आगे]

पहला अङ्क

चौथा दृश्य

स्थान—राजोद्यानका मार्ग

समय—सूर्योदयके पश्चात्

महाराज मिहिरकुल राजोद्यानमें टहल रहे हैं, आकृतिसे गम्भीर जान पड़ते हैं। कभी-कभी पक्षियोंके कलरवसे आकृष्ट हो कर उधर देख लेते हैं। कभी-कभी द्वारकी ओर मुड़ कर देख लेते हैं, जिससे जान पड़ता है कि किसीकी प्रतीक्षामें हैं।

मिहिरकुल—समस्त उत्तर भारत पर मेरा प्रभुत्व है। मध्यभारतके भी कई राजा मेरे अधीन हैं। परन्तु मैं अभी सन्तुष्ट नहीं हुआ। मेरा मनोरथ बड़ा ऊंचा है। मेरी इच्छा बड़ी महती है। मिहिरकुल समस्त भारत पर विजय प्राप्त कर शान्त होगा। भारतका चक्रवर्ती सम्राट् बनेगा, (रुक कर) मैं एक हूण विशाल साम्राज्यका सम्राट् बन कर साँस लूंगा। बंगालसे लेकर पारस तक सब प्रदेशोंके राजा हूण सम्राट्के संकेत गामी होंगे। (टहलते हुए) परन्तु एक बात मुझे ठीक नहीं दिखाई देती। यशोधर्मन् अपना शीश उठा रहा है। उसे मसलना होगा। साँपको फण उठाते ही उसे कुचल डालना चाहिए। (सामने देखते हुए) कौन ? अच्छा आ गये।

(सेनापतिका प्रवेश)

सेनापति—(प्रणाम करके सविस्मय) महाराज! कौन वह मन्द भाग्य है ? किसको यमपुरीसे सन्देश आया है ?

मिहिरकुल—जिसका यहाँसे अन्न-जल उठ गया है।

सेनापति—हाँ, कौन है वह अभागा ?

मिहिरकुल—सेनापति जी! घबराहटकी कोई बात नहीं। अभी आपको सब विदित हो जायगा। आपसे कुछ आवश्यक विषय पर विचार करना है।

सेनापति—कहिए!

(नेपथ्यमें गीतका शब्द सुनाई देता है।)

मन मत कर इतना अभिमान!
खूब सजाई कञ्चन काया,
सोना चांदी द्रव्य कमाया,
निशि-दिन श्रम कर जोड़ी माया,
जिस दिन यमका रथ घर आया,
किया अकेले ही प्रस्थान।
मन मत कर इतना अभिमान॥

मिहिरकुल—(चौंक कर) यह कौन गा रहा है।

सेनापति—गीतसे तो कोई बौद्ध जान पड़ता है।

मिहिरकुल—(चिढ़ कर) सवेरे ही बौद्ध?............

(बौद्ध गाता हुआ आगे बढ़ता दिखाई देता है)

मन मत कर इतना अभिमान।
ऊँचे गिरि भी झुक जाते हैं,
महल धूलमें मिल जाते हैं,
मुकुट नृपोंके छिन जाते हैं,
सब विनाशमें छिप जाते हैं,
धन वैभव यौवन सामान।
मन मत कर इतना अभिमान॥